संसारका सर्वश्रेष्ठ पुरुष

अर्थात्

महात्माजीके विषयमें प्रसिद्ध प्रसिद्ध

विदेशी समाचारपत्रों तथा

मान्य पुरुषोंके मतोंका

संग्रह
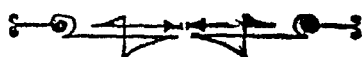
संग्रहकर्ता तथा अनुवादक—

छविनाथ पाण्डेय, बी० ए०, एल० एल० बी०

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता।

प्रथमबार] फाल्गुन १६७६ [मूल्य ॥)

जगदीशनारायण तिवारी द्वारा
मुद्रित
वणिक् प्रेस, ६० मिर्जापुर स्ट्रीट
कलकत्ता।

प्रकाशकका निवेदन

सस्ती पुस्तक मालाकी तीसरी संख्या 'संसारका सर्वश्रेष्ठ पुरुष' लेकर आज मैं हिन्दी प्रेमियोंके सामने उपस्थित होता हूं। इस मालाकी पहली पुस्तक श्रीयुक्त बंकिम बाबूका प्रसिद्ध उपन्यास "आनन्द मठ" और दूसरी पुस्तक श्रीयुक्त स्टोक्सकी " पश्चिमी सभ्यताका दिवाला " का जितना आदर जनताने किया है, उसी आशापर यह तीसरी पुस्तक प्रकाशित की गई है। महात्माजी क्या हैं और उनके विषयमें विदेशी सज्जनोंकी क्या सम्मति है, इस पुस्तक द्वारा यह भली भांति आपपर प्रकट हो जायगा। यह पुस्तक बहुत पहले ही प्रकाशित हो गई होती पर अनेक कारणोंसे ऐसा न हो सका। पुस्तक कैसी है, इसके विषयमें मैं कुछ न लिखूंगा। पाठक स्वयं इसकी जांच कर लें। पुस्तक जितनी उपयोगी है उसे उतनी ही सस्ती और सुन्दर बनानेकी चेष्टा की गई है। आशा है हिन्दीके प्रेमी पाठक इसे अपनाकर मेरा उत्साह बढ़ावेंगे। ताकि हम इस मालामें ऐसी ही उत्तम और उपयोगी पुस्तकें सस्ते मूल्यमें आपलोगोंको भेंट कर सकें।

विनीत—

प्रकाशक

अनुवादकका निवेदन

महात्माजीके मानस-हृदयने देवताका स्थान प्राप्त कर लिया है। प्रत्येक भारतवासी उनको उसी दृष्टिसे देखता है जिस दृष्टिसे द्वापर आदिके लोग वीर हनुमान और अर्जुन आदिको देखते थे। यदि इस युगमें मनुष्यके नाते देवत्व प्राप्त करनेमें कुछ कमी रह जाती है तो वह भावी सन्ततितक दूर हो जायगी और उनके लिये महात्माजी देवता हो जायंगे तथा उनकी कार्यवाहियां हमारे प्राचीन वीरोंकी कथाओंका स्थान प्राप्त कर लेंगी।

फिर ऐसे नरपुंगवोंकी प्रशंसामें पुस्तकोंकी क्या आवश्यकता है। इसके उत्तरमें हम केवलमात्र इतना ही कह सकते हैं कि यह संग्रह हमने केवल इस अभिप्रायसे किया है कि जो लोग महात्माजीको पागल समझते हैं वे भिन्न भिन्न मतोंको सामने रखकर पढ़ें और देखें कि वे वास्तवमें क्या हैं?

इस पुस्तकमें हमने प्रायः विदेशियोंके ही मत दिये हैं क्योंकि भारतके वे पूज्य और मान्य नेता हैं ही। जिन लोगोंके मनमें महात्माजीकी ओरसे अब भी आशंका बनी है वे इस संग्रहको पढ़ें और अपना मत स्थिर करें। यदि जनताने इसे अपनाया और कुछ भी लाभ उठाया तो हम अपना प्रयास सार्थक समझेंगे।

निर्जला एकादशी
कलकत्ता

हरिनाथ पाण्डेय

विषय सूची

पृष्ठ

सस्ती पुस्तकमालाकी चौथी संख्या।

भक्ति शास्त्र

ले०—स्वामी विवेकानंद

शीघ्र ही प्रकाशित होगी।

संसारका सर्वश्रेष्ठ पुरुष
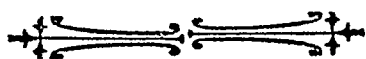
महात्मा गांधीपर एक दृष्टि

महात्माजीकी सादगी और स्पष्टवादिताने वर्त्तमानकालके राज-नीतिज्ञोंको चक्करमें डाल रखा है। उनका ख्याल है कि महात्मा-जीमें कोई आधिदैविक शक्ति है। न तो उन्हें किसीका भय है और न वे किसीपर अपना दबदबा जमाना चाहते हैं। वे केवल उन्हीं सामाजिक बन्धनोंको स्वीकार करते है जो समाजमें रहनेके लिये नितान्त आवश्यक हैं और जिनको स्वीकार किये बिना समाजमें रहना असम्भव है। उनका न तो कोई गुरु है न मास्टर और न उनका कोई चेला है। लोगोंका ख्याल है कि उनमें कोई दैवी शक्ति है पर महात्माजीका इसमें विश्वास नहीं। वे अपनेको साधारण मनुष्यसे परे नहीं समझते। न तो उनके पास कोई सम्पत्ति है, न रुपया है, न धन, पर तोभी वह किसीके दरवाजे भीख मांगते नहीं देखे जाते। हमारे वे देशवासी जिनके सिरपर पाश्चात्य सभ्यताका भूत सवार है, जो पाश्चात्य संस्कृतिके रंगमें रंग गये हैं वे न तो महात्माजीकी शक्तिको समझ ही सकते हैं और न वे उन्हें पसन्द करते हैं। उनका कहना है कि महात्माजी

असभ्य, आशावादी और सुखस्वप्न देखनेवालोंमें हैं। पर मेरी समझमे उनमें सब गुण वर्त्तमान हैं क्योंकि वे सभी प्रकारके जीवनसे अभ्यस्त हैं और सभी बातोंका प्राकृतिक निरीक्षण करते हैं।

कोई उन्हें निहिलिस्ट बतलाता है, कोई अराजक और कोई टालस्टायका अनुयायी। इनमेंसे एक तो उन्हें मानना ही पड़ेगा। वे शुद्ध सनातनधर्मी हिन्दू हैं जिनकी ईश्वर, धर्म और धार्मिक पुस्तकोंमें पूरी श्रद्धा है। वर्णाश्रम धर्ममें भी उनकी अटल श्रद्धा है पर उसके वर्ग विच्छेदको वे नही स्वीकार करते। ८ कनौजिया और ९ चूल्हेकी प्रथाको वे नहीं स्वीकार करते। वे केवल प्राचीन क्रमागत वर्णाश्रमके चार भेदोंको स्वीकार करते हैं। एक वर्णका दूसरे वर्णपर किसी प्रकारका आधिपत्य वे नहीं स्वीकार करते, बल्कि उनका मत है कि अपनी नैसर्गिक योग्यताके अनुसार सबको सब काम करनेका हक है। जातिपांतिको वे पैतृक सम्पत्ति मानते हैं। अराजकतासे वे दूर भागते हैं, संगठन, अधिकार और आज्ञाकारिताके वे पूर्ण पक्षपाती हैं। उनका सिद्धान्त निषेधात्मक नहीं है बल्कि आत्मसंयम और आत्मबलके सहारे आज्ञाकारिताके वे पूर्ण पक्षपाती हैं। वे इस बातको स्वीकार करनेके लिये तैयार नहीं हैं कि सफेद जातियोंको ईश्वरने दूसरोंपर शासन करनेके लिये ही भेजा है और इसलिये उन्हें इस बातका अधिकार है कि वे दूसरोंको अपना साधन बना कर उनपर स्वेच्छाचरिता पूर्वक शासन करें। वे पाश्चात्य सभ्य-

ताको घृणाकी दृष्टिसे नहीं देखते पर वे यूरोपीय आर्थिक लोलुपतासे घृणा करते हैं जिसके आधारपर पाश्चात्य सभ्यता खडी है और वे पाश्चात्य राजनीतिज्ञोंकी दुरंगी चालोंसे भी घृणा करते हैं। असहयोग सिद्धान्त, जिसके वे पिता और प्रवर्त्तक हैं निषेधात्मक नहीं है। उसमें केवल अंग्रेजोंके साथ उन कामोमें सहयोग करनेको मना किया गया है जिसके द्वारा वे हमारी सहायतासे हमींपर शासनकर अपने लाभके लिये हमारा सर्वनाश कर रहे हैं।

असहयोग आन्दोलनके निम्नलिखित कार्यक्रम हैं :—

(१) उपाधियोंका परित्याग (२) मादक द्रव्योंका त्याग (३) सरकारी विद्यालयोंका वहिष्कार क्योंकि उनमें शिक्षा पाकर हमारे बालक और बालिकायें दास बन जाते हैं और इस प्रकार मतिहीन हो जाते हैं कि अपने अन्नदाताओंपर ही अनेक तरहके अत्याचार और जुलम करने लगते हैं। (४) ऐसे राष्ट्रीय विद्यालयोंकी स्थापना जिनमे उपयोगी शिक्षा देशी भाषा द्वारा दी जाय और अंग्रेजीकी शिक्षाको द्वितीय स्थान मिले। (५) अंग्रेजी अदालतो, और वकीलोंका वहिष्कार (६) विदेशी वस्त्रोंका वहिष्कार और, स्वदेशीकी स्थापना (७) सरकारी नोकरी, सेना और पुलिसकी नौकरीका वहिष्कार (८) इनकमटिक्स या मालगुज़ारीका न देना।

यह कार्यक्रम पूरा नहीं कहा जा सकता और यह एक साथ ही प्रयोगमें नहीं लाया जायगा। महात्माजीने अपने अनुयायियोंके साथ केवल बारह मासतक इस कार्यक्रमका अनुसरण किया है

पर इसमे उन्हें आशातीत सफलता मिली है। उपाधियोंके परित्याग करनेवालोंकी संख्या कुछ अधिक नहीं है और बहुत कमही वकीलोंने वकालत छोड़ी है। सरकारी विद्यालयोंके वहिष्कारके संवन्धमे अपनी ओरसे कुछ न कहकर मैं कलकत्ता विश्वविद्यालयके वाइस चांसलरके शब्दोंको ही उद्धृत कर देता हूं। आप कलकत्ता हाईकोर्टके जज थे और सरकारके पूर्ण विश्वसपात्र हैं। विगत उपाधि-वितरणके अवसरपर आपने अपने भाषणमें कहा है:-केवल बंगालके कालेजोंमें छात्रोंको संख्या २३ फी सदी और स्कूलोंमें२७ फी सदी घट गयी है और इससे विश्वविद्याव्यको कई लाख रुपयेका नुकसान हुआ है। विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारमे भी आशातीत सफलता मिली है। इसका असर लंकाशायरके वस्त्रव्यवसायपर भीषण पड़ा है। देशी बाजारोंमें २५ फी सदी विदेशी वस्त्रोंको बिकी घट गयी है। यह कहना अत्युक्त न होगा कि गरीब और मध्यम वृत्तिके लोग तो महात्माजीके साथ हैं पर धनीमानी उनके विरोधी हैं। पर कितने ही धनीमानी भी उनके सहायक और साथी हैं। इसका प्रमाण तिलक-स्वराज्य कोपका चन्दा है। यह इन्हीं धनियोंकी बदौलत था कि तीन मासके भीतर ही भीतर एक करोड़से भी अधिक रुपया एकत्र हो गया थी। इन्हीं तीन महीनोंमें कांग्रेसका संगठन भी महात्माजीने पूरीतरहसे कर डाला। इस समय लगभग एक करोड़ सदस्य काग्रेसके हैं। महात्माजीने चरखेकी उपयोगिता बतलायी और उसके प्रचारको अपील की। इस समय देशमें जितने चरखे चल रहे हैं,

पर्याप्त हैं और महात्माजीकी सफलताके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। पर सबसे बढ़कर सफलता उन्हें इस काममें मिली है कि उन्होंने प्रत्येक भारतवासीके हृदयमें स्वतन्त्रताकी आकांक्षाका बीज बो दिया है और सबको सहनशील तथा शांति-प्रिय बना दिया है। महात्मा-गांधीके अनुयायियों और रूसके क्रान्तिकारियोंमें आकाश पातालका भेद है। उनका कोई काम गुप्त नहीं है। वे जो कुछ करते हैं सबके सामने करते हैं। देश या विदेशमें उनकी कोई गुप्त समितियां नहीं हैं और न इस तरहकी समितियोंसे उनका कोई सम्बन्ध है। वर्तमान शासनप्रणालीके वे कट्टर शत्रु हैं और उसका समूलोच्छेदन कर वे भारतकी पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते हैं, चाहे वह ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत हो या बाहर, जैसा उपयुक्त हो।

यह कहना अनुचित न होगा कि उच्च पदाधिकारी और विद्वन् मण्डली जो सरकारके साथ पूर्ण सहयोग कर रही है असहयोग आन्दोलनका विरोध करती है क्योंकि इसके कारण उनकी अवस्था खराब हो जायगी, वे निर्धन और गरीब हो जायंगे। ब्रिटिश शासनने लूटके काममें इन्ह अपना सहायक और मातहत बना रखा है। पूंजीवाद और साम्राज्यवाद समान-वस्तु हैं। पढ़े लिखे लोग प्राय: १५० वर्षोंसे सुधारकी रट लगा रहे हैं पर सरकार कानमें तेल डाले बैठी है। पहले स्वराज्यकी चर्चा ही न थी। केवल चन्द उच्च पदों और उदार:शिक्षानीतिसे ही लोग सन्तुष्ट थे। १६०५ में एक नये दलका आविर्भाव हुआ

और उस दलने स्वतन्त्रताका झण्डा खड़ा किया। सरकारने और उन विद्वानोंने भी देखा कि उनकी हार होनेवाली है, बना बनाया खेल बिगड़ा जाता है। कुटिल राजनीतिज्ञ जान मार्लेने शतरंज-की गोटी खूब बैठायी और एक ही चालमें उसने बाजी मात कर दी। उसने माडरेटोंको मिलानेकी सोची और एतदर्थ उसने जूठनके दो चार टुकड़े उनके सामने फेंक दिये। बस इतनेमें तो वे मस्त हो गये, फूले नहीं समाये, भक्तिपूर्ण कृतज्ञताप्रकाशमें लीन हो गये और हर तरहसे गरम दलवालोंकी जड़ खोदकर फेंक देना ही अपना परम कर्त्तव्य समझ बैठे।

इसीके बाद युद्ध छिड़ गया। लार्ड मार्लेके पिट्ठू और देशी-राजोंने ब्रिटनका साथ दिया। जनताके दिलमें यह बात समबायी गयी कि ब्रिटनकी विजय होनेसे सबको स्वतन्त्रताका लाभ होगा। फिर क्या था रक्तकी नदियां बहायी गयीं। धन जन तथा युद्धकी सामग्री युद्धक्षेत्रमें पानीको तरह बहाये गये, यद्यपि देशकी दशा उस समय अतीव शोचनीय थी और केवल एकमात्र युद्ध-ज्वर (इन्फ्लूआंजा) से लाखों आदमी मर चुके थे। किसी तरह अंग्रेज बहादुर विजयी हुए और भारतको रौलेट ऐक्टका प्रसाद मिला, जिसके द्वारा सम्पूर्ण स्वतन्त्रताका अपहरण होता। इस समय तक महात्माजी अपनी सादगी और सदाचारसे सर्वप्रिय बन गये थे। युद्धमें रंगरूटोंकी भर्तीमें उन्होंने भी सरकारकी सहायता की थी। अब उन्होंने रौलेट ऐक्टके विरुद्ध सत्याग्रह की घोषणा की।

तबसे सरकार अपना दमन-चक्र तेजीके साथ चलाती आ रही है, सभायें गैरकानूनी ठहराकर रोकी और बंद कर दी जा रही हैं वक्ता और लेखक जेलोंमे ठूंसे जा रहेहैं, पर इससे आन्दोलन बढ़ता ही जा रहा है। भारत शान्तिमय संग्राममें प्रवृत्त है। स्त्रियां भी इस आन्दोलनमें पूर्णतया प्रवृत्त होने लगी हैं। हजारोंकी संख्यामें वे शुभ्र खद्दर धारण किये सभाओंमें सम्मिलित होती हैं। हार्दिक घृणा व्यक्त करनेके लिये लाखों रुपयेके विदेशी वस्त्र होलिकामें दहन कर दिये गये। लाखों आदमी सविनय अवज्ञाके लिये तैयार हैं, पर इस आन्दोलनको पूर्णतया शान्तिमय रखनेके हेतु इसके प्रवर्तक अभीतक इसके लिये आज्ञा नहीं दे रहे हैं। यदि कोई व्यक्ति गिरफ्तार होता है तो जमानत न देकर वह सीधे हवालात जाना स्वीकार करता है। इससे वह यही प्रगट करना चाहता है कि ब्रिटिश न्यायमे उसका विश्वास नहीं रहा। वह सरकारी अदालतोंको नहीं मानता। कई स्थानोंपर जनता अधीर हो उठी और काबूके बाहर होकर पुलिस और सरकारी कर्मचारियोंपर अनेक तरहके अत्याचार कर बैठी। महात्माजीने उसकी निन्दा की और उनके लिये प्रायश्चित्त किया।

स्वतन्त्रताका यह आन्दोलन प्रायः सभीके हृदयोंमें अपनी मजबूत जड़ जमा चुका, अब यह सरकार और शिक्षित समुदायके हाथसे बाहर हो गया। सरकार दमन कर सकती है पर आन्दोलनको दबा नहीं सकती। महात्मा गांधीके अधिकांश अनुयायी अब भी औपनिवेशिक स्वराज्यके पक्षमें हैं पर इसमें जितनी

देर होगी जनताकी आकांक्षा उतनी बढ़ेगी और कुछ समयके बाद पूर्ण स्वराज्य विना काम न चलेगा।

—लाजपतराय

संसारका सबसे बड़ा आदमी !

आज मैं आप लोगोंको यह बतलाना चाहता हूं कि संसारमें सबसे बड़ा मनुष्य कौन है? इस प्रश्नका उत्तर पूछनेके लिये हमलोगोंका ख्याल स्वतः युद्धकी घटनाओंकी ओर जायगा और विशेषतः १६१६के आरम्भिक महीनोंकी ओर जिस समय सभी सैनिक योद्धा पेरिस नगरमें एकत्रित थे। यदि दो वर्ष पहले यही प्रश्न पूछा गया होता तो हमलोग एकमत होकर उत्तर देते कि संसारका सबसे बड़ा मनुष्य इन मित्रसंघके राजनीतिज्ञोंमें पाया जायगा। इन लोगोंपर जो दारुण विपत्तिका पहाड़ घहराया था वह शायद् ही किसी जातिके ऊपर पड़ा हो और ये लोग जिस धैर्य और सहनशीलतासे उसका सामनाकर अन्तमें विजयी हुए, यह जानकर विस्मित और चकित हो जाना पड़ता है। आज उनकी दूसरी तरहसे परीक्षा हो रही है अर्थात् विजयप्राप्तिका उपयोग किस प्रकार करना चाहिये। इस कठिन आंचमें तपाये जानेपर सबके सब निकम्मे निकले। वर्सेलमें जो कुछ हुआ, अथवा सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर करनेके बादसे जो कुछ हो रहा है उसे देखकर कौन कह सकता है कि ये लोग—जिनके ऊपर शान्तिभंगकी सारी जिम्मेदारी है—किसी भी प्रकारकी महत्ताके योग्य हैं। उस सन्धिसभामे जितने लोग उपस्थित थे, उनमेंसे केवल

एक व्यक्ति है जो अपनी मर्यादाकी अबतक रक्षा कर सका है। मेरा अभिप्राय दक्षिण अफ्रीकाके प्रधानमन्त्रीसे है। उनकी चर्चा करते हुए श्रीयुत वाल्टर लिपमनने कहा था, संधिसभामें सम्मिलित होकर जिन लोगोंने सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किया था, उनमे केवल वही एक व्यक्ति था जिसने अपना ही स्वार्थ न देखकर औरोंका भी कुछ ख्याल किया था। यदि आप उनकी महत्ताको जानना चाहते हैं तो आप उनके तीन पत्रोंको पढ़िये। सबसे पहले उनका वह व्याख्यान पढ़िये, जिसमें उन्होंने सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर करनेके कारण सवसाधारणसे क्षमाप्रार्थना की है। दूसरे उनका वह लेख पढ़िये जिसे उन्होंने लन्दनसे जोहान्सवर्ग प्रस्थान करते समय प्रकाशित कराया था और तीसरे आप उनका वह पत्र पढ़िये जो उन्होंने राष्ट्रपति विलसनके पास अन्तिम समय भेजा था जब कि वे अपने पदसे हट रहे थे। जेनरल स्मट्स पूर्ण योग्यता और अविचलित हृदयसे संग्राममें प्रवृत्त रहे, विजयको सन्निकट देखकर भी वे शत्रुको क्षमादानके लिये तैयार हो गये, जिससे संसारके प्राणिमात्रको शान्ति मिले। कौंसिलचेम्बरमे हार जानेपर उन्होंने विना किसी संकोचके अपनी असफलता स्वीकार कर ली और क्षतिपूर्तिके लिये तैयार हो गये। युद्धके जीर्ण शीर्ण अशका अवशेष केवल यही मनुष्य है जिसे किसी तरहकी महत्ता या प्रतिष्ठा प्रदान की जा सकती है। नहीं तो इतर लोग, जिन्होंने अपनी क्षणिक स्फूर्तिसे संसारको चकाचौंध कर दिया था, आज निशाके घोर तममें विलीन हुए जाते हैं और उनके

प्रकाशमें आनेकी पुनः सभावना नहीं है। जिस प्रकार गिलाबोआके युद्धके बाद डेविडने शोकातुर होकर कहा था, "सभी प्रतिष्ठाके पात्र लुप्त हो गये और यौद्धिक शस्त्रोंका नाश हो गया," उसी प्रकार आज हम भी शोक मना रहे हैं।

इसलिये उस क्षेत्रसे हम अलग होते हैं और उन आदमियोंकी गणना छोड़कर अन्यत्र कहीं ढूंढ़नेका प्रयास करते हैं। मेरी दृष्टिमें इस समय तीन आदमी आते हैं जिनका समुद्भव और पद्धति एक दूसरेसे भिन्न है पर इस योग्य हैं कि वे

"संसारके सबसे बड़े मनुष्य कहे जा सकें।"

पहला मनुष्य इस पदवीके योग्य रोमेन रोलाण्ड है। वह फरासीसी है। अन्तर्राष्ट्रीय स्वतन्त्रताके वह कट्टर पक्षपाती है और सदासे उसका यही आदर्श रहा है। इसी सिद्धान्तके प्रचारके कारण युद्धके समयमे उसे देशनिर्वासनका दण्ड भोगना पड़ा था। उसकी महत्ता जितनी उसकी सफलताके कारण नहीं है उतनी उसके आदर्श सिद्धान्तोंके कारण है। मेरा अनुमान है कि व्यक्तित्वको छोड़कर यह व्यक्ति हर प्रकारसे लियो टालस्टायका अनुरूप है। इसका प्रभाव और आचरण ठीक उन्हींके समान है। आप जानते हैं कि उन्नीसवीं शताब्दीमें टालस्टायके समान दूसरा कोई व्यक्ति इस पृथ्वीपर नहीं पैदा हुआ था। उन्हींकी भांति यह भी सादगीसे जीवननिर्वाह करता है, उन्हींकी भांति उच्च आत्मा, अमोघ शक्ति और अगाध विद्वत्ताको एक ही

सूत्रमें ग्रथित कर सकता है। उन्हींकी भाँति उसके जीवनका आदर्श भी सदाचार और अध्यात्म है जिसमें प्रेमका स्थान सबसे ऊंचा है और भ्रातृभावका आदर्श सबसे प्रधान है।

युद्ध आरम्भ होनेसे पूर्व ही इस महान आत्माने इस आपत्तिकी सम्भावना समझ ली थी और इसको रोकनेकी उसने भरसक चेष्टा की। उसने साहित्यद्वारा अपने हृदयके भावोंको महाद्वीपके कोने २ फैलाया और इस तरह उसने महाद्वीपभरके नवयुवकोंको अपने पास एकत्रित किया। उसने उन लोगोंको इस उच्च आदर्शकी शिक्षा दी और उसे पूरी आशा थी कि राष्ट्रीयताके द्वेषपूर्ण भाव अन्तर्राष्ट्रीय भावके सामने अवश्य सिर झुकावेंगे। इसी अभिलाषासे जर्मनी और फ्रांसको एक दूसरेकी परस्पर स्थिति समझानेके लिये ही जीन क्रिस्टाफ नामी पुस्तक लिखी गयी। उसके लिखे जानेका तात्पर्य कवित्व शक्तिका प्रकाश करना न था। उसका अभिप्राय यही था कि दोनों परस्परके भावको समझकर अपना भ्रातृभावका सम्बन्ध बनाये रखें। युद्ध आरम्भ हो जानेपर भी उसने अपने सिद्धान्तोंको नहीं छोड़ा और उनका प्रचार करता ही गया, जिसका स्वभावतः परिणाम यह हुआ कि उसे शक्तिके हाथों अपमानित होना पड़ा। अपनी आत्माके प्रतिकूल उसने एक क्षणके लिये भी इस बातको स्वीकार नहीं किया कि युद्ध द्वारा परस्परका मनोमालिन्य दूर हो जायगा और उच्च आकांक्षाओंका मनुष्यके हृदयमें समावेश होगा। बल्कि इसके विपरीत वह सदा यही कहता गया कि अन्य युद्धोंकी

भांति यह युद्ध भी कुत्सित प्रवृत्तिका द्योतक है और मनुष्यकी आत्मामें जो कुछ उच्च और महत्वशाली शक्ति है उसका यह नाश कर देगा। इसलिये वह उस महाशक्तिकी रक्षाके लिये हर तरहसे प्रयत्न करने लगा, जिससे संग्राम समाप्त होनेपर लोगोंको उस ज्योतिके लुप्त हो जानेपर इधर उधर अंधेरेमें भटकना न पड़े। आज युद्ध समाप्त हो गया। रोलाण्ड पुनः अन्तर्राष्ट्रीय भ्रातृ-भावके संगठनका प्रयास कर रहा है और वह इस बातकी चेष्टा कर रहा है कि लोगोंकी रक्तपिपासा शान्त हो जाय, उनके हृदय-मेंसे आत्माभिमानका विष दूर हो जाय और सब मिलकर उस अटल साम्राज्यकी स्थापनाका प्रयत्न करें जहां युद्ध और विप्लवका नामतक नहीं है।

यदि यूरोपीय सभ्यतामें आज भी कुछ सार है, यदि इस अस्त व्यस्ततामें कुछ भी प्रकाश शेष है, और यदि आदर्श जीवनकी पुनः प्राप्तिकी हमलोगोंमें कुछ भी आशा बाकी है तो इसका श्रेय रोमेन रोलाण्डपर ही है न कि मार्शल फोच, मुस्यु क्लेमांसो, लाडयजार्ज, उडरो, विलसन या इस तरहके अन्य किसी व्यक्तिपर जो युद्ध द्वारा संसारमें शांति स्थापित करनेकी व्यर्थ चेष्टा करते रहे। रोलाण्ड अपने आदर्श सिद्धांतपर डटा रहा, अटूट साहसके साथ उसका समर्थन और प्रतिपादन करता गया और उसके कारण उसे वह सफलता मिली जिससे उसका नाम आज सबसे पहले स्मरण किया जाता है। यदि उसमें किसी तरहकी कमी है तो वह व्यावहारिक नियमोंकी है। पर उसे असफलता

नहीं कहना चाहिये क्योंकि उसमें उसकी प्रवृत्ति ही नहीं है। रोलाण्ड मार्मिक, तात्विक और कलामर्मज्ञ है। ऐसी अवस्थामें उसी पुराने प्रचलित मार्गका ही अनुसरणकर चलना उसके लिये नितान्त कठिन है। वह किसी प्रकारकी क्रांतिका अगुवा नहीं हो सकता, न वह जनताकी शक्तिका संगठनकर संसारमें किसी तरहका भीषण परिवर्तन ही ला सकता है और न वह नैतिक या सामाजिक नियम ही बना सकता है। जिस प्रकार लियो टालस्टाय अपने जीवनके उद्देश्यके अनुसार संग्रामके बाहरी रूपका ही निरीक्षण करता रहा और तज्जनित रक्तपातमें हाथ नहीं लगाता था उसी प्रकार रोलाण्ड भी अपनी प्रकृतिके अनु-सार वाह्य कारणोंका ही अवलम्बन करता है। वह आदर्शवादी है और वास्तविकताकी ओर उसका ध्यान नहीं जाता। उसका प्रखर तेज इस संसारके अन्धकारमें भी देदीप्यमान है और लोगोंको पथभ्रष्ट होनेसे बचा सकता है। उसके सामने दूसरोंकी ज्योति धुंधली है जिसका अवलम्बनकर मनुष्य अवश्य ही गर्तमें जा गिरेगा।

आदर्श और वास्तविकताके प्रसंगमें मुझे दूसरे व्यक्तिका भी स्मरण हो आया और मैं उसकी भी चर्चा कर देना उचित ही समझता हूं। मेरा अभिप्राय बोलशेविक रूसके नेता निकोलेई लेनिनसे है। यह भी अद्वितीय पुरुष है। आज संसारमें ऐसा शक्तिशाली शायद ही कोई दूसरी आत्मा हो। संसारकी वर्तमान महान शक्तियोंसे इसकी तुलना करनेके हेतु हमें अपने मनसे उन

भावोंको निकाल देना चाहिये जो हमलोगोंने उसके कामके विषय-में अपने हृदयोंमें जमा रखा है। हम यह मान लेते हैं कि उसके सिद्धान्त बुरे हैं, अनर्थकारी हैं, उसके प्रभावसे संसारकी सभ्यताके मटियामेट हो जानेकी सम्भावना है, पर इससे क्या उसकी योग्यतामें किसी प्रकारकी कमी आ सकती है। कितने लोग वीर नेपोलियनको आचारभ्रष्ट और उसकी नीतिको कलुषित बतलाते हैं और उसकी कार्यनगहीको हानिकर बतलाते हैं। पर आजतक संसारमें एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं हुआ जो उसकी योग्यता और महत्तापर विश्वास न करे। यदि ऐसे निकले तो केवल एच० जी० वेलस महोदय जो अपने ऐतिहासिक ग्रन्थमें उसकी योग्यताको भी अस्वीकार करते हैं। यही बात लेनिनके विषयमें भी है। वर्तमान समयमें हम उसे नीचतम व्यक्ति मान सकते हैं पर उसकी योग्यता और महत्ता निर्विवाद है। वर्तमान संसारमें उसका स्थान उतना ही ऊंचा है जितना किसी डीलडौलवाले मनुष्यका बौनोंमें हो सकता है। इस समय वह संसारका केन्द्र हो रहा है और जिस तरह पहिया धुरेके चारों ओर चक्कर मारती है उसी तरह संसार उसके चारों ओर चक्कर मार रहा है। जिस प्रकार हमलोग एलिजबेथ और लूईके युगकी चर्चा करते हैं उसी प्रकार यह युद्धके बादका समय 'लेनिनका युग' कहलायेगा।

यदि लेनिनकी योग्यताके लिये किसी प्रमाणकी आवश्यकता है तो केवल उनलोगोंकी उक्तियां पर्याप्त होंगी जिन्होंने उसे देखा

है और उसके सम्पर्कमें रहे हैं। प्रथम समागममें कोई भी उससे [illegible] नहीं होता क्योंकि उसका शरीर अतीव क्षीण और दुर्बल है। उसमें वीरताके कोई भी लक्षण देखनेमें नहीं आते। [illegible] जिनपर उसका बहुत ही कम असर पड सका था [illegible] बारेमें लिखते हैं—"लेनिन देखनेमें इतना छोटा है कि बैठने- पर वह कुरसीमें एकदम छिप जाता है। बर्ट्रण्ड रूसल लिखते हैं कि "वह बड़ा ही मिलनसार है और सादा है। अभिमान तो उसे छूतक नहीं गया है। कोई अपरिचित व्यक्ति उसे देखकर सहसा नहीं कह सकता कि यह इतना महान व्यक्ति है और इसमें ऐसी [illegible] है। दम्भाभिमान तो इस व्यक्तिमें छूतक नहीं गया है।" उसके सम्पूर्ण शरीरमें प्रभावित करनेवाली केवल एक वस्तु है और वह उसका उन्नत ललाट है जिसे देखते ही हम [illegible] बोध हो जाता है कि वह कितना बुद्धिमान और चतुर है। उसकी लम्बी और धनुषाकार भौंहोंको देखकर सहसा महा- कवि शेक्सपियरकी प्रतिमा स्मरण हो जाती है। इसके अतिरिक्त [illegible] शरीर उतना ही प्रभावशून्य है जितनी उसमें [illegible] है।

जिस किसीने उसे देखा है, स्वीकार किया है कि वह महान पुरुष है। बोल्शेविक सिद्धान्तके पक्षपाती आर्थर रैनसमका तो [illegible] कहना है कि "वह वर्तमान समयका सबसे बड़ा आदमी है।" बर्ट्रण्ड रसल, जो किसी समय बोल्शेविक सिद्धान्तके पक्ष [illegible] थे पर आज उसके विरोधी हो रहे हैं, लेनिनके बारेमें कहते

हैं—"वह महान पुरुष है"। ध्यान रखिये कि महान शब्दके पहले किसी गुणवाची संज्ञाका प्रयोग नहीं किया गया है। रेमण्ड राबिन्स न तो बोल्शेविक सिद्धान्तके समर्थक हैं और न विरोधी। उनका भी कहना है कि "लेनिन वर्त्तमान समयमें यूरोपका सबसे बड़ा राजनीतिज्ञ है"। जिन लोगोंको उसके संसर्गमें आनेका अवसर नहीं मिला है बल्कि दूरसे ही उसे जान सके हैं, वे भी उसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। मि० फ्रैंक वाण्डर-लिपका मत है कि "लेनिन अपरिमित योग्यतावाला व्यक्ति है"। अमरीकाका न्यूयार्क टाइम्स पत्र बोल्शेविक सिद्धान्तका कट्टर शत्रु है। पर उसने भी लेनिनके बारेमें लिखा है—"विगत युद्धके कारण जिन लोगोंके व्यक्तित्वका प्रकाश हुआ है उनमें लेनिनका स्थान सबसे ऊंचा है।"

क्या कारण है कि लोग उसके बारेमें इस प्रकारकी राय देते हैं? इसका एकमात्र कारण यही है कि इन तीन वर्षोंमें जो कुछ उसने किया है उसकी महत्ताको इन सब लोगोंकी आत्मा स्वीकार करती है। इतिहास इसके कार्योंकी समता नहीं रखता। प्रथम तो उसने अपने बाहरी और भीतरी दोनों शत्रुओंके दांत खट्टे कर दिये। एकके बाद दूसरी सेना तैयारकर मास्कोपर चढ़ाई करनेके लिये भेजी गयी पर बोल्शेविक सैनिकोंने सबका काम तमाम किया, यद्यपि उन्हें हर तरहकी असुविधाओंमें लड़ना पड़ता था। प्रायः लोग लेनिनकी तुलना फ्रांसकी राज्यक्रान्तिके समयके वीर सेनापति राब्सपीयर डैण्टन और मैरटके साथ करते हैं पर

यदि वास्तवमें देखा जाय तो लेनिनके मुकाबलेका उस समय केवल एक व्यक्ति था, अर्थात् कार्नट जिसने क्रान्तिका झण्डा उठाया और यूरोपके कुलीनतन्त्रकी सेनाओंको परास्त किया।

दूसरे, लेनिनने रूसको पतनसे बचाया जो इस महायुद्धके बवण्डरमें अवश्यम्भावी था और जिसकी अब भी सम्भावना है। मेरा यह कथन लोगोंको प्रतिकूल जंचेगा क्योंकि अधिकतर लोगोंका मत है कि बोल्शेविक सिद्धान्तके प्रचारसे ही रूसमें अराजकता छा रही है, यही उसकी आन्तरिक दुरवस्थाका कारण है, सामाजिक पतन और जनताकी अधोगति इसीसे हुई है। पर यह बात एकदम निर्मूल है। बोल्शेविकोंकी प्रधानताके नव मास पूर्व ही अपनी दुरवस्था और पतनके कारण जारका साम्राज्य नाश हो गया था। रूस साम्राज्यका पतन उस विनाशकारी युद्धका तात्कालिक फल था, क्योंकि युद्धका अभिप्राय ही विनाशक होता है, भला उससे रक्षा कब हो सकती है। रूसमें जो कुछ १९१७ में हुआ वही फ्रांसमें हुआ होता यदि युद्ध एक वर्षतक और चलता रह जाता और वही इङ्गलैण्डमें भी होता यदि वही युद्ध चार या पांच वर्षतक और जारी रहता। रूसके इतने शीघ्र विनाशका यही कारण था कि आधुनिक वैभववान राष्ट्रोंमें रूसकी दशा सबसे खराब और पतित थी और यही कारण है कि वह युद्धके बोझको अधिक कालतक सम्हाल न सका। जारके पतनके बाद जिन क्रान्तिकारियोंके हाथमें शासनकी बागडोर गयी उन्होंने अवस्थाको सम्हालना और सुधारना

चाहा पर वे कृतकार्य न हो सके। उनके बाद करेन्स्कीके हाथमें अधिकार आया पर उसकी भी वही दशा हुई। उसके बाद लेनिन प्रगट हुए, उन्होंने अपना जबर्दस्त कन्धा लगाया और अभीतक तो वे स्थितिको सम्हाल ही सके हैं। आज रूसमें उसी तरहकी अराजकता नहीं छा रही है, उसके नगर आज एकदमसे धनजन-हीन नहीं हैं, उसकी रेलकी सड़कें बेकाम पड़ी मुर्चा नहीं खा रही हैं। आज उसकी रेलें जंगलोंमें भी सीटियां बजा रही हैं और उसके मस्त सिपाही स्थान स्थानपर देखे जा रहे हैं। यह सब केवल लेनिनके प्रभावसे है। यदि एच० जी० वेल्सकी भविष्यवाणीमें कुछ भी सार्थकता है कि "सारे यूरोपके भाग्यमें एक दिन वही होना लिखा है जो आज रूसमें हो रहा है तो मेरी यही भावना है कि वह समय आवेगा जब लोग इस व्यक्तिको संहारक न कहकर बड़ी श्रद्धा भक्तिके साथ सभ्यताका, सामाजिक बन्धनका रक्षक कहकर स्मरण करेंगे।

जब हमलोग उसके कामोंकी पर्यालोचना कर रहे हैं तो उसके विधायक कार्योंपर भी एक सरसरी दृष्टि डालनी उचित होगी। इतनी दुरवस्था और कठिनाइयोंके होते हुए भी उसने कई महत्वशाली और उपयोगी काम किये हैं। उसने अर्थशास्त्रके लिये कम्युनिजम (साम्यवाद) का नया सिद्धान्त निकाला है, सोवियट नामकी नयी सामाजिक संस्थाकी स्थापना की है और मजदूरोंके लिये स्वतन्त्रताका आदर्श निकाला है।

यह उस व्यक्तिकी गुणगाथा है जिसे हमलोग उच्च कोटिका

बुद्धिमान कह सकते हैं। यदि लेनिनमें किसी प्रकारकी कमी है तो वह सदाचारिक आदर्शकी। जहांतक दृष्टिगोचर हो सका है उसमें इसका जरा भी विचार नहीं है। उसका कोई भी धार्मिक विश्वास नहीं है। वह केवल वास्तविकताका उपासक है। उसके मतसे सदाचारके नियम कोई वस्तु नहीं हैं और न वह उनपर कभी ध्यान ही देता है। जिसको हमलोग धर्मसंज्ञा देते हैं उसके बारेमें उसका कहना है कि बलवानोंने दुर्बलोंपर अपनी सत्ता बना रखने और अपने अधिकारों तथा सम्पत्तिकी रक्षाके लिये ये अप्राकृतिक नियम बना डाले हैं। लेनिन उन्हीं सब बातोंको संगत और उचित मानता है जिसके द्वारा काम करनेवालों (मजूरों) का हितसाधन हो और इसके बाधक सभी उपायोंको वह असगत और अनुचित बतलाता है। अपने सिद्धान्तोंके प्रचारमे वह उसी प्रकार कट्टर और तत्पर है जिस तरह सेनापति युद्धक्षेत्रमें होता है, अर्थात् अपने शत्रुपर विजय पानेके हेतु जैसे सिपाही किसी भी उपायके प्रयोग करनेसे बाज न आवेगा और उसे दूषित न समझेगा, उसी तरह वह भी करता है। उसका मत है कि साध्य ठीक होना चाहिये, साधन कैसा भी हो सकता है। लेनिन मानव-समाजकी मुक्ति और सामाजिक जीर्णोद्धारके लिये घोर प्रयत्न कर रहा है और इसमें सफलता प्राप्त करनेके लिये जो कुछ भी उपाय प्रयोगमें लाये जायं उसकी दृष्टिमें सभी संगत हैं जबतक मनुष्य उस आदर्शतक पहुंचनेके योग्य न बन जाय। इस वास्तविक बोधसे लेनिनके जीवनके विरोधात्मक अंशोंका ज्ञान हो

जाता है। लेनिन कट्टर प्रजातन्त्रवादी है पर उसकी क्रूरता और अनाचार हृदयको कंपा देते हैं। वह अत्याचारी और जालिम नहीं है पर ६ सप्ताहतक उसने जो ऊधम मचा रखा था वह सदा स्मरण रहेगा। वह सांग्रामिक शक्तिका प्रतिपादक नहीं है पर इस समय उसके पास सबसे बलिष्ठ सेना है। आजतक संसारके इतिहासमें इस प्रकारका परस्पर विरोधी गुणोंवाला व्यक्ति कभी भी देखनेमें नहीं आया था। वह कट्टर सुधारक है, उसका चरित्र परम पवित्र है, बनावट रहित एकदम सादगीका जीवन वह बिताता है, वह संसारकी दशा बदलनेके लिये तन, मनसे लगा है, उसका सारा प्रयत्न मानवजातिको उन्नत बनानेके ही लिये है, वह अपने लिये कुछ भी नहीं चाहता। इतनेपर भी वह कर्कश, कटु, अनुदार और संगदिल है। उसके हृदयमें दयाका लेश नहीं है। यदि कुछ दया है भी तो वह केवल बच्चोंके लिये। उसका हृदय कोमलता या सहृदयताशून्य है। वह फौलादकी तरह कठोर और अभेद्य तथा नीरस है। यही कारण है कि मि० वेलसने उसकी तुलना मुहम्मद पैगम्बरसे की है। मि० रूसलको उसे और उसकी कार्यप्रणालीको देखते ही क्राम्वेल और प्युरिटन धर्मका स्मरण हो आया और मुझे नपोलियन बोनापार्ट स्मरण हो आता है। ये सब तुलनायें सदोष हैं पर इससे उस मनुष्यकी वास्तविक प्रकृतिपर कुछ प्रकाश अवश्य पड़ता है।

पर अभीतक हम लोगोंको सर्वश्रेष्ठ पुरुष कोई भी नहीं दखायी दिया। आदर्शवादी रोलाण्ड वास्तविकतामें नहीं

ठहरता और लेनिन वास्तविकतामें इतना अधिक घुस गया है कि आदर्शवादके सिद्धांतको वह स्वीकार ही नहीं करता। पर सर्वश्रेष्ठ पुरुष वही हो सकता है जिसमें ये दोनोंही गुण वर्तमान हों अर्थात् जो आदर्शवादी भी हो और वास्तविकताका अनुयायी भी हो। तो क्या ऐसा कोई भी मनुष्य दृष्टिगोचर होता है?

मेरी समझमें ऐसा मनुष्य है। मुझे उसका पहले पहल परिचय १९१७ में मिला। हिवर्ट मासिकपत्रमें अध्यापक गिलवर्ट मरेने उसपर एक लेख लिखा था। दो तीन मास तक मुझे उसके बारेमें फिर कुछ जाननेका सौभाग्य प्राप्त न हुआ। एक दिन मुझे एक छोटी सी पुस्तक मिली जिसमे उस महान व्यक्तिके लेखों और भाषणोंमेंसे उक्तियां थी। यह पर्याप्त न था पर जब मैंने उसे पढ़ा तो मेरी आंखका पर्दा हट गया और मेरे हृदयमे आह्लादका उसी तरहका तरंग उठा जैसा जान कीट्सके हृदयमें उठा था जिस समय उन्होंने पहले पहल चैपमैन कृत इलियडका अनुवाद पढ़ा था।

इस महान व्यक्तिका नाम मोहनदास कर्मचंद गांधी है। इसके देशवासी इसकी देवतासी उपासना करते हैं, इसे महात्मा करके मानते हैं और यह उस आन्दोलनका विधायक है जिसे भारतवासियोंने ब्रिटिश शासनके विरुद्ध उठाया है। मेरा विश्वास है कि आप लोगोंमेंसे बहुत ही कम उसके नाम और कामसे परिचित होंगे। जो कुछ मैं उसके बारेमें कहता हूं उसे ध्यानपूर्वक सुनिये, तब आपको मालूम होगा कि मेरा यह

कहना कि यह "सर्वश्रेष्ठ पुरुष है" सर्वथा सच और यथार्थ है।

गांधीका जन्म किसी सम्पत्तिशाली और सुशिक्षित वंशमें हुआ था। इस समय उसकी अवस्था प्रायः ५० वर्षकी है। धनिकोंके लड़कोंका जिस प्रकार लालन पालन होता है और जिस प्रकारकी शिक्षा दीक्षा उन्हे दी जाती है उसीका अनुकरण, इसके लिये भी किया गया था। १८८६ मे वह विलायत गया बैरिस्टर होकर भारत लौटा और बंबईमें वकालत करने लगा। उसे उसी समय विदित होने लगा कि धर्महो मनुष्य-शरीरका प्रधान अंग है। विलायत यात्राके पहलेही उसने मांस मद्यका प्रयोग न करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली थी। भारत लौटनेपर उसका धार्मिक भाव और भी बढ़ गया। उसने देखा कि सम्पत्ति मोक्षके मार्गमे बाधक है। इससे उसने अपनी सारी सम्पत्ति उपयोगी कार्य्योंके लिये दान कर दी और केवल अपने भरण पोषण भरके लिये रख ली। बादको उसने दरिद्र रहना ही निश्चय कर लिया और भिखारी बन गया। अन्तमें वह सत्याग्रही बन गया और वकालत छोड़ दी; क्योंकि उसका कहना है कि उसके द्वारा बाध्य करके कोई काम कराया जा सकता है। १६१४में गिलबर्ट मरेसे उससे विलायतमें मुलाकात हुई थी। उस समय वह केवल भात खाता था, पानी पीता था और निखरहरे तख्तेपर सोता था। बातचीतमें पूर्ण विद्वत्ता झलकती थी और उसका त्यागमय जीवन हर तरहसे पूर्ण था। उसने अपनी इन्द्रियोंपर इस तरह अधिकार कर लिया है कि वे उसके मार्गमें किसी तरहकी बाधा नहीं

पहुंचा सकती। जीवनके आरम्भकालसे ही उसका झुकाव मानव समाजके हित-साधनकी ओर था।

उसका सार्वजनिक जीवन दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है। प्रथम काल १८९३ से १९१३ तकका है। इस कालका सम्बन्ध दक्षिण अफ्रीकासे विशेष है और दूसरा १९१३के बादका है। उसका संबंध एकदम भारतसे है।

उन्नीसवीं शताब्दीके आरम्भकालमे दक्षिण अफ्रीकाके नेटाल आदि प्रान्तोंमें प्रायः डेढ़ लाख भारतवासी जा बसे थे। इन विदेशियोंके कारण उस समय वहांकी स्थिति उसी तरहकी हो गयी थी जैसी आजकल जापानियोंके भरमारसे कैलिफोर्निया की है। कहनेका तात्पर्य यह है कि रंगका प्रश्न इतने प्रबल वेगसे उठा कि अफ्रीकन सरकारको उसके लिये उपाय करना पड़ा और उसने दोनों तरीकोंका सहारा लिया, अर्थात् हिन्दुस्तानियोंकी आमद बन्दकर और बसे हुओंको भी निकालकर। पहली बात तो ठीक थी पर दूसरी न्यायतः असंगत थी। नेटालने इसका भीषण विरोध किया, क्योंकि वहांके रोजगारका सुसम्पन्न होना सस्ती मजूरी-पर निर्भर था। पहली बात तो केवल बहिष्कारके नियम बना देनेसे सिद्ध हो सकती थी। भारत सरकारने भी इसका विरोध किया। भीषण संग्राम आरम्भ हो गया। सफेद जातियोंका अभिवाञ्छित सिद्ध नहीं हुआ। अब वे लोग नीचतासे काम लेने लगे. अर्थात् कुलीवर्गके अतिरिक्त वे जिन हिन्दुस्तानियोंको पाते उन्हें सताते और हरतरहसे तंग करते और उनका जीवन कष्टमय

बना देते। इस तरह बिचारे भारतवासियोंपर करों और टिकसों-का बोझ लाद दिया गया। कुली कमीनोंकी भांति उन्हें दफ्तरोंमें जाजाकर अपने नाम दर्ज़ कराने पड़ते थे और अपराधियोंकी भांति उन्हें अंगूठाके निशान देने पड़ते थे। खुलेआम उनका अपमान किया जाता था। जहां कानूनी अधिकार भारतीयोंको सतानेमें उनकी सहायता नहीं कर सकता था वहां वे गुण्डोंको इकट्ठाकर भारती-योंको लूटते और उनकी बस्तीमें आग लगा देते थे। इनको भगानेके लिये ऐसे कोई भी क्रूर उपाय न थे जो नहीं किये गये।

१८९३में अफ्रीकाके भारतीयोंने महात्मा गांधीकी शरण ली। वह उनकी सहायताके लिये तैयार हो गया क्योंकि उसका मत है कि यदि अपने देशवासियोंपर कहीं अत्याचार होता हो या वे कष्टमें पड़े हों तो प्रत्येक देशवासीका धर्म है कि या तो वह उन्हें उस विपत्तिसे मुक्त करे या स्वयं भी उसी तरहकी यातना भोगे। वह १८९३में नेटाल गया और प्रायः १९१२तक वहीं रहा। इस समय तक वह बैरिस्टरी करता था। एशियाइयोंके वहिष्कार विषयक जो कानून बने थे, उसका विरोध किया। चारोंओरसे शोर गुल मच गई। पक्षपात और बेईमानीकी तो कोई सीमा न थी। पर न्यायके नामपर उसे विजय मिली। उसके बाद राजनीतिक और सामाजिक अधिकारोंके लिये युद्ध आरम्भ हुआ। इस युद्धमें उसने सत्याग्रह अस्त्रसे काम लिया था। इतने भीषण संग्राममें एक बार भी उसने या उसके अनुयायियोंने न शान्ति भंग की और न बदलेकी सोची।

डर्बन नगरके बाहर उसने अपने अनुयायियोंके लिये एक बस्ती बसायी। जिन लोगोंने उसके साथ आजन्म दरिद्र रहनेकी शपथ ली उन्हें उसने यहीं बसाया और खेतीका काम जारी किया। यहीं रहकर सत्याग्रही वीर अनेक तरहकी यातनाओं और क्रूरतम अत्याचारोंका सामना करके सत्याग्रहका युद्ध जारी रखा। इस युद्धमें ये लोग शहरोंसे भारतीयोंको खींच लाते थे जिससे अंग्रेजोंके कारबार और हाथ पांव रुक जाते थे। इसकी तुलना केवल मूसा पैगम्बरकी उस हड़तालसे की जा सकती है जिस समय फैरोहके प्रतिकूल वह इस्रलाइटको नगरसे हटा ले गया और बस्तीको उजाड़ छोड़ गया। पर इसमें भी एक विशेषता थी जो मानव-समाजके इतिहासमें कभी भी देखनेमें नहीं आयी। ऐसे युद्धोंमें प्रायः यही देखनेमें आता है कि सत्याग्रही अपने शत्रुओंकी कठिनाई और लाचारीका अधिकसे अधिक लाभ उठाना चाहते हैं। पर यह गांधीके सिद्धान्तके प्रतिकूल था। इन युद्धके दिनोंमें यदि किसी बाहरी घटनाके कारण अफ्रीका सरकारपर कोई विपत्ति आ जाती तो गांधी ऐसे समय लाभ उठाकर अपना भला करनेके बजाय अपने युद्धको बन्द कर देता, सरकारसे सुलह कर लेता और स्वयं उनकी रक्षा और सहायताके लिये तैयार हो जाता। १८९९में बोरयुद्ध आरम्भ हुआ। इस समय गांधीने अपना सत्याग्रह संग्राम स्थगित कर दिया। स्वयंसेवक संघका संगठन किया और युद्धके दिनोंमें बराबर काम करता रहा। इसकी प्रशंसा सरकारी खरीतोंमें दो बार की गयी और अद्भुत साहसके लिये वहां

भी प्रशंसा हुई। दूसरी बार१९०४में जोहांसबर्गमें भीषण प्लेग आ-रम्भ हो गया। उस बार भी गांधीजीने अपना युद्ध स्थगित किया और वह संक्रामक क्षेत्रोंसें अस्पताल बनवानेकी फिक्रमें पड़ गया। १९०६में नेटालवासियोंने बलवा कर दिया। उस समय भी गांधीने सत्याग्रह-सग्राम स्थगित कर दिया और आहतोंको ढोने-के लिये स्वयंसेवक दल बनाया जो कार्य अत्यन्त भया-वह था। इस अवसरपर स्वयं नेटाल सरकारने मुक्तकण्ठसे गांधीकी प्रशंसा की और उसे धन्यवाद दिया। पर थोड़ेही दिनोंके बाद जब उसने सत्याग्रह-संग्राम फिर जारी किया तो साधारण कैदियोंकी भांति जेलमें ठूंस दिया गया। इन दिनोंमें जो जो अत्याचार गांधीपर किये गये उनके वर्णनके लिये यहांपर उप-युक्त स्थान नहीं है। अनेक बार तो वह जेलमें ठूंस दिया गया। हाथमें हथकड़ी और पैरोमें बेड़ी डालकर वह कालकोठरीमें बन्द कर दिया गया, कितनी ही बार हुल्लडशाहीकी चपेटमें पड़ गया, पीटा गया और मुर्दा करके छोड़ दिया गया। उसका जितना अपमान किया गया वह वर्णनसे बाहर है। पर वह किसी भी तरहसे अपने पथसे न डिगा। उसका धैर्य, साहस, निष्प क्षपात, उसकी क्षमता और दयाभाव ज्योंका त्यों बना रहा। उस मे जरा भी कमी नहीं आयी और बीस वर्षकी कड़ी यन्त्रणाके बाद उसकी विजय हुई। १९१३ मे लार्ड हार्डिञ्जने इस प्रश्नको अपने हाथमें लिया। इम्पीरियल कमीशन जांच करनेके लिये बैठी और उसकी रिपोर्टने गांधीके मतका समर्थन किया। तदनुसार भारती-

योंके स्वत्वको स्वीकार करनेके लिये कानून बना। आजतक तो संसारमें दूसरा उदाहरण नहीं मिलता जिसमें शत्रु या विपक्षीको किसी तरह सताये, दुख दिये या शान्तिभंग किये बिना शत्रुके सम्पूर्ण अत्याचारोंको सुखपूर्वक स्वयं बरदाश्तकर उसे लाचारकर विजय मिली हो।

उसके जीवनका दूसरा काल १९१३से आरम्भ होता है। इस कालका उस क्रान्तिकारी आन्दोलनसे सम्पर्क है जिसका जन्म उसकी अनुपस्थितिमें हो चुका था अर्थात् जब वह दक्षिण अफ्रीकामें काम कर रहा था। भारत लौटते ही उसने उसमें प्रवेश किया पर १९१४ में जर्मन युद्ध छिड़ जानेसे उसने अपना सभी कार्य, जो ब्रिटिश शासनके प्रतिकूल था, बन्द कर दिया। उस समय ब्रिटिश सरकारके प्रतिकूल किसी प्रकारका आन्दोलन उठाना वह कायरता समझता था। इसलिये जबतक युद्ध जारी रहा, अपने धार्मिक तत्त्वोंके अनुसार गांधी ब्रिटिश सरकारकी बराबर सहायता करता रहा।

युद्ध समाप्त होते ही अंग्रेजोंका भारतीयोंपर अत्याचार आरम्भ हो गया। गांधीने संग्रामका झण्डा पुनः खड़ा किया और असहयोग आन्दोलनको जन्म दिया, जो इस समय ब्रिटिश साम्राज्यकी जड़ खोदकर फेंक देनेकी तैयारी कर रहा है। जो क्रान्ति गांधीने जारी की है उसकी इतिहासमें समता नहीं है। इसके मुख्य चार रूप हैं :—

(१) इसका लक्ष्य भारत सरकारका अनर्गल शासन है। वह

खुले आम इस बातकी घोषणा करता है कि "विदेशियोंकी सत्ता और उनके बोझको तथा उसके कारण किये गये अत्याचारों और अन्यायोंको रोकने और सदाके लिये उठा देनेके लिये ही मेरा सारा प्रयास है। जबतक सरकार इस तरहका अन्याय करती रहेगी मैं उसका कट्टर शत्रु बना रहूंगा।" और आगे चलकर फिर वह कहता है "मैं इस सरकारको लाचार और पंगु बना-कर ही छोड़ूंगा और जिस न्यायके लिये हमलोग इतने दिनोंसे मुंह बाये थे उसे करवाकर ही छोड़ूंगा। मैं तो जान बूझकर सरकारका विरोधी बना हूं और उसकी दशा निरीह बना देना चाहता हूं।" गांधी जानता और कहता है कि यह प्रत्यक्ष बगावत (राजद्रोह) है। उसका कहना है कि यदि मुझपर राजद्रोहका मुकदमा चलाया जाय तो मैं अपनेको अपराधी स्वीकार कर लूंगा। क्योंकि मेरा सारा प्रयास केवल इसलिये रहता है कि इस सरकारके प्रति लोगोंके हृदयमें घृणाके भाव उत्पन्न हो जायं, जिससे लोग इसके साथ सहयोग करना या इसकी सहायता करना घृणित और शर्मको बात समझें, क्योंकि यह विश्वास, आदर और प्रतिष्ठाके योग्य नहीं रह गयी।

पर उसके हृदयमें अंग्रेजोंके प्रति घृणाका भाव नहीं है। हमलोगोंकी तरह उसका हृदय कलुषित नहीं है। हमलोग सरकारके साथ वहांकी जनताको भी सान लेते हैं जैसा विगत युद्धके समय हुआ था। पर यह बात उसमें नहीं है। उसने अनेक अवसरोंपर कहा है:"—अंग्रेजोंसे मैं उतनी ही सहानुभूति रखता

हूं जितनी मनुष्य मनुष्यके साथ रख सकता है। मैं उनका सहयोग चाहता हूं। पर यह बराबरीके नाते होना चाहिये जिसमें किसीकी मर्यादा भङ्ग न हो।

(२) इस आन्दोलनमे पशुबल या अशांतिको कोई स्थान नहीं है। अहिंसा और शांति यही दो इसके मूल सिद्धान्त हैं। गांधी पक्का सत्याग्रही है। वह शांतिमय उपायों द्वारा ही विजय चाहता है। वह कहता है,—"पशुबल यूरोपमे सफल हो सकता है पर भारतमे तो यह सर्वथा अनुपयोगी है। हमारा शस्त्र पाक और साफ होना चाहिये और हमारा युद्ध शुद्ध होना चाहिये। इसलिये अंग्रेजोंके पशुबलका सामना आत्मबलसे, उनकी बेईमानीका सत्यतासे, उनकी चालबाजी और मक्कारीका स्पष्टवादिता और सादगीसे, उनके अत्याचार और जुल्मका धैर्य और साहससे मुकाबला करना चाहिये। जो लोग हमारा साथ देनेके लिये तैयार नहीं हैं उनपर भी हमें किसी तरहकी ज्यादती नहीं करनी चाहिये।" यदि लेनिन इसी नीतिका अनुसरण करता तो आज संसारको कैसा अनुपम लाभ पहुंचता। गांधी अपने अनुयायियोंको सदा इसी बातकी शिक्षा देता रहता है कि उन्हें प्रत्येक अंग्रेज और सरकारी नौकरकी जानको उतनाही पवित्र मानना चाहिये जितना वह अपना और अपने कुटुम्बियोंका मानता या समझता है। यदि आज आयर्लैंडके सिनफिनर इसी तरह आचरण करने लगें तो आज आयर्लैंडकी दशामें कितना परिवर्तन हो जाय! गांधी फिर कहता है—"जिस दिन भारतवासी तलवार (शस्त्र)

का सहारा लेंगे मेरा सम्बन्ध उससे टूट जायगा। उस दिनसे इस देशका गौरव भी मेरे हृदयसे लुप्त हो जायगा।"

असहयोगके सिद्धान्तको इस आधारपर चलानेका यह कारण नहीं है कि भारतीय कमजोर हैं, बल्कि उसका कहना है कि हमारी शक्ति इतनी प्रबल है कि हम हर तरहके अत्याचारोंको सुगमतापूर्वक सह सकते हैं। गांधी कहता है—"अहिंसा दुर्बलोंका नहीं बल्कि जोरावरोंका अस्त्र है। मेरी समझमें उस आदमीकी आत्मा सबसे बलिष्ठ है जो निःशस्त्र होकर भी शत्रुके सम्मुख निडर खड़ा रहता है और अपना प्राण गंवाता है। भारतकी शक्तिके कारण ही मैं अहिंसाका युद्ध जारी कर रहा हूं। उसके लिये किसी प्रकारके शस्त्रकी आवश्यकता नहीं है। हमें शस्त्रकी आवश्यकता तभी पड़ती है जब हम अपनेको केवल मांसपिण्ड मान लेते हैं। मैं चाहता हूं कि भारत इस बातको समझ ले कि शरीरके अन्तर्गत अमर आत्माका निवास है और शारीरिक दुर्बलता और पशु-बलको वह मात कर विजयी होगी।"

गांधी अहिंसाका प्रचार करता है क्योंकि उसकी समझमें यही उचित है। वह कहता है—"हिंसा द्वारा न्याय नहीं कराना चाहिये। आत्मत्याग द्वारा न्याय कराना ही सर्वोत्तम है। अहिंसा सर्वोत्तम है। क्षमादान दण्डदानसे कहीं श्रेष्ठ है। क्षमादान सर्वोत्कृष्ट आभूषण है।"

यही कारण है कि वह अपने आन्दोलनको धर्मयुद्ध बतलाता

है। वह तो यहांतक कहता है कि "अहिंसा ही विजयका एकमात्र उपाय है और इसी द्वारा प्राप्त विजय स्थायी रह सकती है। पूर्ण शान्ति रखना और अहिंसाके मार्गपर चलना ही विजयका द्योतक है। यदि भारत चाहे तो जान मालकी बरबादी कर सकता है, पर इससे कोई लाभ नहीं होगा। अत्याचारोंको सहना ही हमारा प्रधान शस्त्र होना चाहिये। जिन लोगोंने इस विश्वको आध्यात्मिक मान लिया है वे इस बातको शीघ्र स्वीकार कर लेंगे। जिस दिन हमलोग इस तात्त्विक मर्मको समझ लेंगे उस रोज हमारी जबानसे क्रोधभरे शब्द भी न निकलेंगे और यदि कोई तलवार भी उठावेगा तो हमें अंगुली भी उठानेकी आवश्यकता न पड़ेगी।"

पर अहिंसा ही पर्याप्त नहीं है। सत्याग्रह केवल सहनशीलतामें ही समाप्त नहीं हो जाता। इसका कुछ विधायक अंश भी होना चाहिये। असहयोगमें यही है। गांधी अपने अनुयायियोंको इसी बातकी शिक्षा देता है कि वे ऐसे किसी सामाजिक या राजनीतिक काममें भाग न लें जिनसे भारतमें ब्रिटिश शासनको सहायता मिले। उन्हें विलायतकी बनी सभी वस्तुओंका त्याग करना चाहिये जिससे ब्रिटिश सत्ता पंगु बन जाय। अर्थात् भारतवासियोंको कौंसिलोंमे न जाना चाहिये, वकीलोंको अदालतोंका त्याग करना चाहिये, अभिभावकोंको अपने सन्तानोंको सरकारी विद्यालयोंसे हटा लेना चाहिये और उपाधिधारियोंको अपनी उपाधि त्याग देनी चाहिये।

अभी हालमें ही युवराजने भारत-भ्रमण किया था। गांधीने उनके बहिष्कारका आदेश दिया और लोगोंने उसका पूर्णतः पालन किया। हर तरहके विलायती मालके बहिष्कार करनेपर विचार हो रहा है पर अभीतक गांधी उसके पक्षमें नहीं है। यदि इस बातका पूर्णतः पालन हो गया तो निस्सन्देह भारतसे ब्रिटिश शासन उठ जायगा। जिस प्रकार विषके प्रभावसे धीरे धीरे सुकरातकी इन्द्रियां शिथिल हो गईं और वह संज्ञाहीन हो गया उसी प्रकार इन उपायोंद्वारा धीरे धीरे ब्रिटिश सरकार पंगु होकर बेकाम हो जायगी। उस समय संसारके सामने एक अद्भुत शक्तिकी प्रतिष्ठा होगी और शान्तिमय अहिंसायुक्त क्रान्तिका आसन सर्वोपरि होगा।

गांधी भारतका आध्यात्मिक, सामाजिक और चारित्रिक सुधार, भारतीय विचार, चलन, रस्मरिवाज आदि आदर्शके अनुसार करना चाहता है। यह इस आन्दोलनकी सबसे विचित्र बात है अर्थात् वह पाश्चात्य संस्कृतिसे—जिसका आधार धन-लिप्सा और पूंजीकी उपासना है—भारतीय सभ्यताकी रक्षा करना चाहता है। इसका श्रीगणेश वह इस प्रकार कर रहा है:-पहले वह परस्पर असमानताके भेदभावको दूरकर सबको एक भ्रातृभावके बन्धनमें बांधनेकी चेष्टा कर रहा है। इस प्रकार वह जातिपांतिकी असमानता और धार्मिक भेदभावको दूर करनेका प्रयत्न कर रहा है। हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिये घोर यत्न कर रहा है। और तभी शान्तिकी स्थापना हो सकेगी। गाँधी

कहता है—"भारत संसारके लिये आदर्श है। वह संसारको दीक्षित करेगा।" इसलिये उसका आदर्श वर्ग, जाति या राष्ट्रकी सीमा लांघकर मानव समाजके लिये ही है। वह कहता है—"मेरा धर्म सीमान्तरित नहीं है।"

यही महात्मा गांधीका असली रूप है। यही महान् आत्मा भारतके साधारण मनुष्योंके साथ विचरती है। जहां कहीं वह जाता है हजारों और लाखोंकी संख्यामें लोग उसके दर्शनके लिये सुदूर देहातोंसे दौडे आते हैं। जहां कहीं वह क्षण भरके लिये ठहर जाता है जनताकी भीड़ लग जाती है। भारतके निवासी उसे देवतातुल्य मानते हैं। वह सदाचारका पक्का, चरित्रका सच्चा और सीधा सादा है। राजनीतिक क्षेत्रमे मह वास्तविकताका कट्टर पक्षपाती है और अपने सिद्धान्तोंका दृढ़ है। पर साथ ही साथ वह आदर्शवादी भी है। मैंने कहा है कि जिस समय रोलाण्डकी चर्चा होने लगती है मुझे लियो टालस्टायका स्मरण हो आता है और जिस समय लेनिनकी चर्चा होने लगती है मुझे नपोलियनका स्मरण हो आता है पर जिस समय महात्मा गांधीकी चर्चा होती है मुझे साक्षात् प्रभु ईशु याद आने लगते हैं।

गांधी सादगीका जीवन बितानेवाला है और अपने वसूलोंका पक्का है। वह उनके लिये हर तरहकी यातना सहनेके लिये तैयार रहता है और इसी तरह वह एक दिन अपना कार्य समाप्तकर अपनी जीवन लीलाका अन्त कर देगा।

तुम्हें स्मरण होगा कि एक दिन प्रभु ईशु यात्रा कर रहे थे कि उन्होंने अपने अनुयायियोंको झगड़ते पाया। प्रभुने उनसे पूछा—"किस बातपर इतना वादविवाद हो रहा है?" उत्तर मिला—"हमलोगोंमें यह प्रश्न उठा है कि सबसे बड़ा कौन है?" उनकी बातें सुनकर प्रभुने कहा—"यदि तुम लोगोंमेंसे कोई उस पदवीको प्राप्त करना चाहता है तो पहले उसे सबका दास बनना चाहिये।"

जान हाइन्स होम्स

महात्माजीकी गिरफ्तारीपर

आप लोगोंको स्मरण होगा कि थोड़े ही दिन पहले यहीं मैंने गांधीके चरित्रकी आलोचनाकर आप लोगोंको बतलाया था कि वर्तमान समयमें उसकी समताका कोई व्यक्ति नहीं है। आज मैं उसके कामोंका पर्यवेक्षण करना चहता हूं कि वह अपने देशवासियोंके उद्धारके लिये किस प्रकार यत्न कर रहा है और संसारके इतिहासपर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा। जिस समय पहले पहल मुझे इस व्यक्तिका परिचय मिला था, संसार इससे प्रायः अपरिचित था। यद्यपि इसके व्यक्तित्वके बारेमें मुझे पूरी सूचना न मिल सकी थी फिर भी जो कुछ मैं जान सका था उसीसे मैंने यह धारणा कर ली थी कि यह अद्वितीय पुरुष है और इसमें कोई उत्कृष्ट शक्ति है। आज गांधीका नाम सबकी जबानपर है। समाचारपत्र तो उसके नामको लेकर धूम मचा रहे हैं। कोई भी अखबार उठा लीजिये—चाहे वह अमरीकामें प्रकाशित होता हो या अन्य किसी पश्चिमी देशमें—गांधीके बारेमें कुछ न कुछ अवश्य लिखा पाइयेगा। 'न्यूयार्क वर्ल्ड' ने तो अपना प्रतिनिधि-तक भारत भेजा था, जिसने लौट आकर "गांधी और उनका शान्तिमय असहयोग" पर लेख लिखा था। घोर अन्धकारमेंसे इसकी दिव्य मूर्त्ति एकाएक उस प्रकाशमय उच्चासनपर जा विराजती है

जो अजर और अमर है। संसारकी आंखे उसीपर लगी हैं। जो उच्चासन किसी समय (१६१८ और १६१६ में) राष्ट्रपति विलसन और लेनिन (१६२१) को प्राप्त था, आज उसीपर महात्मा गांधीकी भव्यमूर्ति विराजमान है। न तो यह व्यक्ति कभी किसी उच्च पदपर रहा, न तो इसने यश या शक्तिकी आकांक्षा की बल्कि नौकरशाहीके जेलकी शान्त वायुका सेवन कर रहा है।

ऐसे महान् व्यक्तिके जीवनमें इस प्रकारका आकस्मिक परिवर्त्तन विना कारण नहीं हो सकता। और कारण भी है। आज मैं केवल उन्हीं चार घटनाओंके वारेमें कुछ कहूंगा जिनकी चर्चा आजकल इस सुदूर देशमें भी हो रही है।

सबसे पहले यह बात जान लेनी आवश्यक है कि भारतमें राष्ट्रीय दलका विकास अति वेगसे हो रहा है। कुछ दिन पहले स्वराज्यवादियोंकी संख्या नहींके बराबर थी और उन्हें लोग स्वप्न समझते थे। शिक्षित समाजके अधिकांश लोग केवल औपनिवेशिक शासनप्रणालीसे ही सन्तुष्ट थे। और अपढ़ जनता या तो इस बातको समझती ही नहीं थी, या समझकर भी उदासीन वैठी थी। पर आज स्वतन्त्रताकी हवा हिमालयसे लेकर कन्याकुमारीतक वह गई है, स्वराज्य मन्त्रकी गूंजकी प्रतिध्वनि बंगालकी खाड़ीसे लेकर अरब समुद्रतक ध्वनित हो गई है। पर इससे यह न समझ लेना चाहिये कि भारत सरकारके कोई भी पक्षपाती नहीं है। देशी राजे, उनके परिचालक

उच्चपदाधिकारी उनके पिट्ठू तथा पूंजीवाले--जिनकी सत्ता और धाक उठ जानेकी सम्भावना है,—इस आन्दोलनके विरुद्ध सरकारका साथ दे रहे हैं। पर यदि गणना करके देखा जाय तो उनकी संख्या दस लाखसे भी कम होगी। इनके अतिरिक्त सभी छोटे बड़े, रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे लेकर, साधारण भंगी चमारतक, स्वतन्त्रताकी तरंगोंमें हिलोरे ले रहे हैं। स्मरण रखिये कि भारतकी आबादी तैंतीस करोड़ है अर्थात् आबादीके पांचवें हिस्सा प्राणी वहां निवास करते हैं फिर कोई कारण नहीं कि उसके आन्दोलनमें संसारको इतनी अधिक दिलचस्पी न हो। जो कुछ आज भारतमें होरहा है उससे प्रभावित हुए विना संसार बचा नहीं रहेगा।

दूसरा कारण उसकी सर्वमान्यता है। जनताने एक स्वरसे उसे इस आन्दोलनका विधायक मान लिया है। थोड़े दिन पहले गांधी अंग्रेज जाति और ब्रिटिश शासनका पक्का भक्त था। साम्राज्य सरकारने कई बार उसे प्रतिष्ठा प्रदान की है। युद्धके समयमें उसने अंग्रेजोंका साथ दिया और जहांतक सम्भव था उनके शासनका समर्थन किया। युद्धके बाद भी वह होमरूलसे अधिक कुछ नहीं चाहता था। अमृतसरके हत्याकांडने, डायरकीगोलियोंने, बेगुनाहोंकी हत्याने गांधीके चित्तको बदल दिया। उसी दिनसे वह पूर्ण स्वतन्त्रताका प्रतिपादक हो गया। १९२०की विशेष कांग्रेसने भी उसके अहिंसात्मक शांतिमय असहयोग आंदोलनको स्वीकार कर लिया। विगत दिसम्बरमे कांग्रेसने पुनः उसका समर्थन किया और गांधीको उसका विधायक नियुक्त

कर दिया। आज वह भारतका भाग्यविधाता है। गांधीके शब्द भारतकी जनताके शब्द हैं और उसके काम भारतकी जनताके काम हैं। उसे गिरफ्तारकर सरकारने सम्पूर्ण भारतकी अवज्ञा की। मेरा तो यही विश्वास है कि यह व्यक्ति जनताका प्राण है।

तीसरे सरकारी दमन-चक्रने इसकी कीर्ति बढ़ानेमें सहायता की। ऐसे अवसरोंपर दमन-चक्र क्यों चलाया जाता है? इसका एकमात्र कारण यही प्रतीत होता है कि शासक अन्धे और विक्षिप्त हो जाते हैं। अनुभव और ऐतिहासिक प्रमाणको सर्वथा भूल जाते हैं और उसकी अवहेलना करते हैं। दमन कभी भी सफल नहीं हुआ है। संसारके प्राचीन या अर्वाचीन इतिहासमें एक भी उदाहरण ऐसा नहीं मिलेगा जिससे यह प्रमाणित हो-सके कि दमनने कुछ अच्छा काम किया। कमसे कम अंग्रेज जातिको तो इसका बुरा फल सदा भोगना पड़ा है। अमरीकामें यह असफल हुआ, घरेलू झगड़ेमें यह असफल हुआ और दक्षिण अफ्रीकामें भी यह असफल रहा। आयर्लैण्डका दृष्टान्त अभी ताजा है। भारतमें भी यह सफल नहीं हो सकता। दमन सदा विपक्षीका फायदा करता है, उससे उसकी ख्याति बढ़ जाती है। शेक्सपियरने लिखा है—"हमलोगोंकी ख्याति बढ़ानेके दो मार्ग हैं, एक तो हमारे शुभचिन्तक और दूसरे हमारे कट्टर शत्रु।" यदि ब्रिटिश सरकार अपना दमन-चक्र इस तेजीसे न चलाती तो भारतीयोंका स्वराज्य आंदोलन इस प्रकार विख्यात न हो गया होता और न लोगोंकी इतनी अधिक सहानुभूति उसके तरफ जाती।

अलीवन्धुओंकी गिरफ्तारीका समाचार संसारके कोने कोनेमे फैल गया और प्रत्येक मुसलमान भारतकी स्वतन्त्रताका प्रतिपादक बन गया। लाला लाजपतरायकी गिरफ्तारीने लाखों अंग्रेजों और अमरीकनोंके चित्तमें खलबली पैदा कर दी, क्योंकि वे लोग जानते थे कि यह व्यक्ति उच्च आकांक्षाओंका प्रतिपादक और सुशिक्षित है और ऐसे व्यक्तिकी गिरफ्तारी अवश्य रहस्यमय होगी। यही बात गांधीकी गिरफ्तारीमें है। संसार उसे जानता है, उसे स्नेहकी दृष्टिसे देखता है, क्योंकि लोगोंका विश्वास है कि यह महर्षि साम्राज्यवादके कुटिल चक्रमें पीसा जाकर आत्मत्यागका अभूतपूर्व उदाहरण संसारके सामने रख रहा है।

अब मैं युवराजकी भारतयात्रापर भी दो चार शब्द कहूंगा, क्योंकि वर्त्तमान आन्दोलनसे इसका भी संबंध है। यह यात्रा भी बेवकूफीकी निशानी थी। भारतकी राजभक्तिकी झूठी झलक दिखानेके लिये यह यात्रा कराई गई सच बात तो यह है कि यदि भारतीयोंके हृदयमें राजभक्तिका लेश भी होता तो ऐसी यात्राकी आवश्यकता न थी। जो कुछ हुआ उससे उलटा ही परिणाम निकला। यात्राका समाचार मिलते ही बहिष्कारका प्रबन्ध किया गया। भारतीयोंने अपने हृदयकी असली दशा व्यक्त करनेका अच्छा अवसर पाया, उन्हें युवराजके प्रति किसी प्रकारका असद्भाव नहीं था। युवराजका बहिष्कार होने लगा। जहां कहीं वे गये जनताने उदासीनता दिखलाई। प्रयाग तो एक दम जनशून्य हो गया था। नगर श्मशान हो गया था, दर-

बाजोंपर ताले चढ़ गये थे और लोग नगरसे बाहर स्वराज्य सभा कर रहे थे। युवराजकी यात्रा भारतकी अशान्तिका पूर्ण द्योतक थी। जो कुछ हो गांधी और उसके आन्दोलनकी कीर्ति इसने दिग्दिगन्तमें स्थापित कर दी।

यही कारण है जिससे लोगोंका ध्यान भारतकी ओर आकर्षित हुआ। इससे लोगोंका बड़ा लाभ हुआ है, क्योंकि उनको गांधी और उसके आन्दोलनका परिचय मिला, क्योंकि मेरी समझमें इस महर्षिका ज्ञान प्राप्त करना परम धर्म है। जो लोग भक्ति और ज्ञानके मार्मिक तत्वको समझते हैं उनके लिये इस महात्माका नाम अमृत है। दूसरे पहलूसे इन घटनाओंपर मुझे दुःख होता है क्योंकि इनके कारण गांधीकी गणना विलियम टेल, गेरीबाल्डी, वाशिंगटन आदिके साथ होती है, जिन्होंने दासताके पाशमें बद्ध दीन हीन प्रजाकी मुक्ति कराई। यह काम गांधी भी प्रतिपादित कर रहा है। भारतके स्वतन्त्रताके आन्दोलनका वही कर्णधार है और उसके मुकाबले कोई भी विजेता नहीं खड़ा हो सकता। पर उसकी गणना केवल उसी पहलूसे करना या उस विषयमें ही उसे प्रधानता देना, भारी भूल है। वह इससे कहीं उच्च है। उसकी आकांक्षायें कहीं अधिक महत्त्वशाली हैं। भारत-की स्वतन्त्रता उसे अत्यन्त प्रिय है, यही उसका वर्तमान लक्ष्य है पर यह उसके जीवनकी एक आकस्मिक घटना है समझना चाहिये, क्योंकि उसका आदर्श इससे कहीं ऊंचा है। यदि स्वतन्त्रताका आन्दोलन न भी जन्म लिये होता तो भी गांधी

ख्याति उतनी ही अधिक होती, यदि आज आन्दोलन दब जाय या असफल हो जाय तोभी गांधीका प्रधान कार्य समाप्त नहीं हो जायगा। जो लोग गांधीकी तुलना वाशिंगटन या गेरीबाल्डीसे करते हैं वे भारी भूल करते हैं, क्योंकि ये लोग सैनिक शक्तिके पक्षपाती थे, अपनी सफलताके लिये, इन्होंने रक्तकी नदियां बहाई थीं या इनके विपरीत गांधी पक्का सत्याग्रही है। स्वतन्त्रताके लिये भी तलवार उठाना उसके धर्मके प्रतिकूल है। उसकी शक्ति अहिंसा और शान्तिमें है। वह सत्याग्रही वीर किसी एककी सम्पत्ति नहीं है, बल्कि विश्वकी। अध्यात्मिकता ही उसके जीवनका प्रधान लक्ष्य है। उसका संबन्ध साक्षात् ईश्वरसे है। अपने देश या जातिके राजनीतिक उद्धारके साथ वह मानव-समाजका आत्मिक उद्धार करना चाहता है। यदि किसी भी ऐतिहासिक महाव्यक्तिसे उसकी तुलना की जा सकती है तो वे लोयटसा, बुद्ध जोरोस्टर, मुहम्मद और नजारिन हैं। इन सभी महाशक्तियोंका प्रादुर्भाव समय समयपर एशिया खण्डमें हुआ है। ये सभी ईश्वरके अंश थे। इन लोगोंने मानव समाजको सच्चा ज्ञान दिया और उसे पतनसे बचाया। आज फिर अवतार हुआ है और वह यही महात्मा है। ऐतिहासिक घटनाओंका पूर्ण-रूपसे पर्यवेक्षणकर मैं इस महात्माकी तुलना प्रभु ईसा मसीहसे करता हूं। यदि इन दोनों महात्माओंका जीवनचरित तुलनात्मक दृष्टिसे लिखा जाय, जैसा प्लुटार्चने रोम और यूनानके वीरोंका लिखा है, तो प्रगट होगा कि दोनोंमें कितनी अधिक समता है।

अब मैं गांधीके अध्यात्मिक जीवनके बारेमें कुछ कहना चाहता हूं। इसके लिये पहले यह ज्ञान लेना आवश्यक होगा कि सर्वसाधारणपर इसका इतना अधिक प्रभाव क्यों है। इसका उत्तर साधारण नहीं है। उसके व्यक्तित्वसे इसका समाधान नहीं हो सकता, क्योंकि वह बहुत ही दुबला पतला व्यक्ति है। उसका वजन १०० पौंडसे भी कम है। तपस्वियोंकी तरह उसका शरीर भी क्षीण है। कभी कभी तो वह इतना कमजोर हो जाता है कि खडा होकर बोल भी नहीं सकता और बैठकर ही व्याख्यान देता है। पर उसके नेत्रोंमें विचित्र तेज है। दोनों आंखें ज्योतिमय हैं, आगके अंगारेकी तरह जलती रहती हैं। उसके प्रभावका कारण उसकी विद्वत्ता भी नहीं है। उसमें असाधारण बुद्धिवैचित्र्य नहीं है। और न इसमें उसने कुछ नाम ही पैदा किया है। उसकी भाषणशक्तिमें भी कोई चमत्कार नहीं है। इस विषयमें मतभेद हो सकता है, पश्चिम और पूर्वमें भेद हो सकता है, पर उसके छपे लेखोंको पढ़कर मैं यही कह सकता हूं कि उसमें भाषणशक्तिकी चमत्कारिता नहीं है। उसके भाषणमें एडमण्ड बर्क और पेट्रिक हेनरीकेसे शब्दाडम्बर नहीं रहते।

आजकी सभामें पढ़नेके लिये मैं उनके व्याख्यानोंसे एकाध अंश लाना चाहता था पर मुझे कोई ऐसा अंश न मिला, जिसमें शब्दाडम्बर भी हो, और जो सरस तथा सारगर्भित भी हो। जनतापर उसका प्रभाव दूसरे ही कारणोंसे है।

महात्मा गांधीके व्यक्तित्वमे भारतीयोंको किस अत शक्ति-ह

का दर्शन होता है? सबसे पहले वे देखते हैं कि इस व्यक्तिने अपना जीवन साधारण व्यक्तियोंके जीवनके साथ ग्रथित कर दिया है। अमीरके घरमें पैदा होकर, समुचित शिक्षाका लाभ उठाकर, सफल बैरिष्टर होकर भी उसने वह अपूर्व त्याग किया जो प्रायः देखनेमें नहीं आता। धनलिप्सासे मुंह मोड़कर समृद्धिसे नाता तोड़कर वह उस घोर अन्धकारतक पहुंचनेकी चेष्टा करने लगा जहां रौरव नरकका दृश्य था, जहां बिना अन्न और बिना वस्त्रके प्राणी घोर यातनाकी असह्य वेदनामें पड़े कराह रहे थे। जीवनके आरम्भ कालसे ही वह समताका पक्षपाती है। उसका मत है, कि यदि मैं इनकी वेदनाको दूर नहीं कर सकता तो इनके समान तो बन सकता हूं। यदि अछूतोंका उद्धारकर मैं उन्हें अपनी श्रेणीमें नहीं ला सकता तो स्वयं आप अछूत बनकर तो उनके साथ रह सकता हूं। मानव समाजकी दुःखमयी भावनाओंको उसने शिरोधार्य किया इस विचारसे जिस किसी बातकी शिक्षा उसने लोगोंको दी पहले उसे स्वयं आप कर दिखाई। दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रही कुलियोंके नेतृत्वकी कथा अतीव रोचक और रोमाञ्चकारी है। सबसे पहले उसीने आराम त्यागा, घर द्वार त्यागा, दरिद्रताका जीवन स्वीकार किया, खेतीका काम आरम्भ किया, हल चलाया और तब उसने उसकी शिक्षा औरोंको दी।

गांधीके परिधानकी कथा और भी रोचक है। उसके शत्रु उसे पागल कहकर उसकी हंसी उड़ाते हैं। पर उसने लँगोटी

धारण क्यों किया ? असहयोग आन्दोलनके कार्यक्रममें विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार भी है। यह कार्यक्रममें लाया गया। विदेशी वस्त्रोंकी होली जलाई गई। उसने आदेश किया कि हाथके कते सूतसे करघेपर बुनकर ही वस्त्र पहना जाय। लोगोंको असुविधाकी सम्भावना हुई। गाँधीने वस्त्र त्याग दिया और लगोंटी पहनकर रहने लगा जिससे वह सबसे गरीब बना रहे। यह सब उसके जीवनकी साधारण घटनायें हैं। उसका सारा प्रयास मानव समाजको नयी शिक्षा देनेका है। भारतकी जनताका वह केवल नेता ही नहीं है वह उनका प्राण है, और बन्धु है। वे उसे अपना ईश्वर मानते हैं।

भारतकी साधारण प्रजाके साथ भ्रातृभाव उसका दूसरा गुण है। गांधीकी वास्तविकताकी जांच करनेमें यह भी बड़े महत्वका है। मैं पहले उसके आत्मत्यागकी बात कहता हूं। जीवनके आरम्भ कालमें ही उसे इसका बोध हुआ कि संसारमें सबसे बड़ा वही मनुष्य है जो दूसरोंको न सताकर आप ही अनेक तरहकी यातनाओंको सहे। और तभीसे वह इसीका आचरण करता रहा। उसने अपना धन, मान, प्रतिष्ठा और सामाजिक बन्धन सभी त्याग दिया जिससे उसे अपने नीचसे नीच भाइयोंके साथ मिलनेमें किसी तरहकी बाधा न उपस्थित हो। और इसी उद्देश्यसे वह आज भी संन्यासीका जीवन बिता रहा है। सुधारककी हैसियतसे उसने दण्डविधिका कभी भी टालमटोल नहीं किया, बल्कि प्रसन्नतासे दण्डाज्ञाओंको स्वीकार किया।

एक बार वह निडर होकर एक हत्यारेके सामने खड़ा हो गया। दक्षिण अफ्रीका और भारतको मिलाकर वह चार बार जेल जा चुका। तीन बार हुल्लडशाहीसे पीटा गया। एक बार तो मुर्दा करके नालीमें फेंक दिया गया था। अभीतक उसकी वदनपर कोड़ोंके मारकी दागें हैं और हाथोंमें हथकड़ियोंके दाग हैं जिनसे वह काल कोठरीके लोहोंके खम्भोंमें बाँधा गया था। गांधीने जो जो दुःख सहे हैं उनके मुकाबलेमें सन्तपालकी दुखद कथायें कुछ नहीं हैं। मनुष्यके किये जो क्रूरतम अत्याचार हो सकते हैं, वह इस व्यक्तिको सहने पड़े हैं और इसका एकमात्र कारण यही है कि आत्मत्याग ही इसके जीवनका उद्देश्य और संग्रामका शस्त्र है। भारतवासी जिस समय अपने इस लंगोटीबन्द नेताको देखते हैं उनके हृदयमें येही भाव उत्पन्न हो जाते हैं। सुदूर देहातोंमें भी लोग गांधीके उन्हीं गुणोंको स्मरण करते हैं। जो सरकार ऐसे महात्माको गिरफ्तार या कैद करके भक्त जनताकी उपासनासे उसे दूर रखना चाहती है उससे बढ़कर इस संसारमें दूसरा मूर्ख न मिलेगा।

गांधीमें सबसे विशेष गुण यह है कि उसके रग रगमें प्रेमके कण समाये हैं। प्राचीन अथवा अर्वाचीन संसारमें शायद ही कोई व्यक्ति हो जिसके हृदयमें मानवजातिके लिये दयाका इतना निर्मल और पवित्र स्रोत बहता हो। ईर्ष्या, क्रोध और घृणासे वह परे है। उसका सारा शरीर मानवजातिके प्रेमसे भरा है। उसकी दृष्टिमें संसार समान है। ईश्वरकी भांति गांधीमें

भी जाति वर्ण या व्यक्तित्वका ख्याल नहीं है। गोरों और कालोंके लिये उसके हृदयमें समान भाव हैं। हिन्दू-मुस्लिम कलहको नाशकर उसने भ्रातृभाव स्थापित किया है। जाति-पांतिके भेदभावको किसी दरजेतक स्वीकारकर उसने उसकी आन्तरिक विषमताको दूर कर दिया है। आज वह ब्राह्मणके साथ अछूतोंको बैठाकर भोजन कराता है। अङ्गरेज़ोंपर भी उसकी ममता है। प्रभु ईशुकी तरह उसका भी आदेश है—"शत्रुओंपर दया करो और उनसे प्रेम रखो।" हजारों बार उसने कहा है—"मैं अङ्गरेज़ोंसे स्नेह रखता हूं और उनका सहयोग चाहता हूं।" दक्षिण अफ्रीकामें एक बार उसके जानपर आ बीती। वह अस्पतालमें पड़ा था। जीवन संदिग्ध था। लोगोंने उस हत्यारेपर मुकदमा चलानेके लिये कहा। उसने साफ इन्कार कर दिया।

उसने कहा—"मैं किसीकी आत्माको क्यों कष्ट दूं। जो कुछ उसने किया ठीक और उचित समझकर किया और मेरी समझमें उसका विचार ठीक था। मैं उससे प्रेम करूंगा और उसे अपनी ओर लाऊंगा।" वैसा ही हुआ। गांधीकी क्षमाका उस हत्यारेके हृदयपर असर पड़ा। थोड़े ही दिनोंमें वह गांधीका कट्टर भक्त और अनुयायी हो गया। जिस कायर डायरने अमृत-सरमें निःशस्त्र जनताका रक्त बहाया है उसके प्रति भी गांधीका यही भाव है। वह कहता है—"मैं उसके अधिकारको स्वीकार नहीं कर सकता। मैं उसकी आज्ञा नहीं मान सकता, मैं उससे

सहयोग नहीं कर सकता पर यदि वह आज बीमार हो जाय तो मैं उसकी सेवा सुश्रूषाके लिये तुरत उपस्थित हो जाऊंगा।" न तो उसके हृदयमे घृणा है न द्वेष और न बदलेकी आग। वह साक्षात् प्रेमका अवतार है। इन कड़ी परीक्षाओंके समयोंमें घोर यातना सहते हुए भी उसने अपने निम्नलिखित शब्दोंको सदा चरितार्थ किया है :—

"क्रोधसे कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। बुराईपर भलाईसे और अनृतपर सत्यसे विजय प्राप्त करना होगा और इसी तरह अत्याचारको साहसके साथ सहना चाहिये।

गांधीके इन्ही गुणोंपर भारतवासी मुग्ध हैं, उसकी उपासना और श्रद्धा करते हैं और इन्हींके कारण वह विश्वविदित हो रहा है। आत्मज्ञानका रहस्य उसने जान लिया है। उसकी उपासनासे उसकी आत्मा उन्नत हो गयी है। नम्रता, त्याग और प्रेम इन तीनों गुणोंसे युक्त नर हजारों वर्षके बाद कभी एक बार अवतरित हो जाते हैं। पर आज वही गांधी जेलमें है। दुनियाके विचारका भार भी कैसे विचित्र लोगोंके ऊपर है। जो समाज गांधी या प्रभु ईशुको भी स्वतन्त्र नहीं देख सकता उस समाजका अस्तित्व ही मिट जाना चाहिये।

गांधीके इस व्यापक महत्वका दूसरा कारण—सत्याग्रह सिद्धान्त है। इसकी व्याख्या वह इस प्रकार करता है:—"सत्याग्रह अनाचारियोंके सामने दीनताके साथ सिर झुकाना नहीं सिखाता बल्कि उनकी उच्छृङ्खलताका आत्मबल द्वारा विरोध

करनेकी शिक्षा देता है। इस व्यक्तिने संसारको दिखला दिया है कि राजनीतिक और सामाजिक सुधारके लिये सत्याग्रह अमोघ अस्त्र है इसने न्यूटन तथा डार्विनकी भांति मानव-समाजके इतिहासमें नये युगकी स्थापना की है।

अबतक सत्याग्रह दो तरहकी असुविधाओंसे युक्त था। पहले तो इसका प्रयोग व्यक्तिगत था। ईसा मसीह, सेन्ट फ्रांसिस, विलियम लायड गेरिसन, हैनरी डेविड थोरियो तथा लियो टालस्टाय सत्याग्रही वीर थे। पर इन्होंने इसका प्रयोग समाजपर कभी नहीं किया। कभी कभी वर्गविशेष या विशिष्ट धार्मिक संस्थाने इसका सहारा लिया था, जैसेपहली और दूसरी शताब्दीके ईसाई आदि। पर इनका सत्याग्रह भी अपने ही तक था। इससे इसका कोई प्रभाव न पड़ा। इनके उदाहरणोंसे केवल इतना पता लगता है कि सत्याग्रहकी सफलता अन्तर्हित सीमातक हो सकती है। पर इसके व्यापक प्रयोगके विषयमें कुछ पता नहीं लगता।

दूसरी असुविधा यह थी कि उस जमानेका सत्याग्रही सांसारिक जीव ही नहीं माना जाता था। मध्ययुगके सत्याग्रही घर द्वार छोड़कर अपने अनुयायियोंके साथ उदासीके जीवन बिताते थे। अर्वाचीन सत्याग्रही टालस्टाय था। वह भी घर द्वार छोड़कर, सबसे नाता तोड़कर धर्म-संस्थासे अलग होकर सन्यासीका जीवन व्यतीत करता था। और अन्तिम समय आहत पशुकी भांति जंगलमें भागा। इन लोगोंका जीवन प्रकाशमय

था। आत्माकी पवित्रता और आत्मत्यागके ये उच्चतम उदाहरण थे। पर इस महत्वको प्राप्त करनेके लिये गैरिसनके अतिरिक्त सभी सत्याग्रहियोंको संसारसे नाता तोड़ना पड़ा था। व्यवहारिक दृष्टिसे इन लोगोंका कोई प्रभाव नहीं था। उन लोगोंने मानव-समाजसे सम्बन्ध विच्छेदकर ही जीवनकी समस्याओंको हल कर पाया। उन लोगोंमें टालस्टाय आदर्श है पर वह भी इन प्रश्नोंपर कुछ भी प्रकाश न डाल सका था और समाजको उसी दशामें छोड़ दिया। इन्हीं दो असुविधाओंके कारण इस सिद्धान्तके प्रवर्तक आर्थिक असुविधा और व्यवसायिक प्रतियोगिताके प्रश्नको हल करनेके लिये इसका प्रचार नहीं करते। पर गांधी नये प्रकारका सत्याग्रही है। वह सत्याग्रहका व्यापक प्रयोग कर रहा है और उसका सिद्धान्त है कि 'बुराईको दबाओ मत।' सामाजिक परिवर्त्तन और राष्ट्रीय स्वतन्त्रताके संग्राममें सत्याग्रहका सर्वव्यापी प्रयोग संसारके सिद्धान्तोंमें एक नया और अमर सिद्धान्त ला जोड़ता है। अहिंसासे आरम्भकर वह मूल सिद्धान्त असहयोगतक पहुंचता है। यह आदिसे अन्ततक निषेधात्मक सिद्धान्त है। इसके द्वारा वह भारतकी राजनैतिक और आर्थिक योग्यताका निष्पादन करता है अर्थात् भारतको स्वराज्यके लिये पूर्णतः योग्य बतलाता है। गांधी अपने अनुयायियोंको आदेश देता है—"अपना काम खुद करो, स्वयं अपने घरका प्रबन्ध करो, अपने विद्यालय स्थापित करो और बिना किसी प्रकारकी प्रतिहिंसाके

दुश्मनोंके वारको बर्दाश्त करो। विदेशी राज्यके अत्याचारोंको सहो। प्रेमके आधारपर वह सामाजिक जीर्णोद्धारका प्रयास कर रहा है। एक दूसरेकी सहायतासे परस्पर प्रेम और दया तथा अहिंसा द्वारा शत्रुसे प्रेम सिखलाता है। वह सिखला रहा है कि पशुबलसे हताश न होना चाहिये और उसके नाशके लिये पशुबलका ही प्रयोगकर अपना अपकार नहीं करना चाहिये। लोगोंको इस प्रकार काम करना चाहिये मानों पशुबल कोई वस्तु ही नहीं है, आत्मदमन द्वारा उससे ऊपर उठना चाहिये और आत्मत्यागद्वारा उसपर विजय पानी चाहिये।

सत्याग्रहके अहिंसात्मक व्यापक प्रयोगमें ही गांधीका महत्व है। इसमें न जातिका भेद है और न देशका ख्याल है। यदि इसमें उसे सफलता मिल गई तो सत्याग्रह संसारका प्रमुख आदर्श हो जायगा और उसपर जो आक्षेप किये जाते हैं कि यह उदासी बनानेके सिवा और कुछ नहीं करता, दूर हो जायगा। और इसकी व्यक्तिगत उपयोगिताका दोष भी मिट जायगा। गांधी सफलता प्राप्तकर यह साबित कर देगा कि किसी प्रकारके राजनैतिक, सामाजिक या आर्थिक सुधारके लिये सत्याग्रह अमोघ अस्त्र है और पशुबलकी अब आवश्यकता न रही। पर मैं क्या कह गया? यदि गांधी सफल होगा? क्यों? उसे तो सफलता मिल गई। उसने उसे दिखला दिया। उसकी गिरफ्तारी उसके विजयकी चरम सीमा थी। इस व्यक्तिका धैर्य इङ्गलैंडके लिये तलवारसे भी भीषण होगा। यदि मनुष्यको नेत्र

हैं तो वह देख सकता है कि गांधीने पशुबलको मातकर शांतिका राज्य पुनः स्थापित कर दिया।

जो कुछ मैंने कहा है वह गांधीके महत्वकी अन्तिम सीमा नहीं है। उसके शत्रु बहुधा कहा करते हैं कि गांधी अपने पागलपनसे संसारकी सभ्यताका मटियामेट करना चाहता है अर्थात् वह औषधिका प्रयोग बन्द कर देना चाहता है। रेलवे लाइनोंको उखाड़कर फेंक देना चाहता है, छापाखानोंको बन्द कर देना चाहता है, कारखानों और पुतलीघरोंको उठवा देना चाहता है, वर्त्तमान युगके यन्त्रादिकोंका प्रयोग बन्दकर फिर प्रारम्भिक मर्यादाकी स्थापना करना चाहता है। इसका उत्तर केवल एक शब्दमें हो जाता है कि जो व्यक्ति इन सब बातोंका प्रयोग करता हो भला वह इनका शत्रु कैसे हो सकता है। जिस समय वह दक्षिण अफ्रिकामें आहत होकर मरणासन्न था उसकी जान अस्पताल ही से बची। भारतमें उसे दौरा करना पड़ता था तो उसने रेलोंका ही प्रयोग किया और जनतामें अपने विचारोंका प्रचार करनेके लिये वह दो तीन पत्र प्रकाशित करता है।

वह केवल भारतसे पाश्चात्य सभ्यताको उठाकर अपनी प्राचीन संस्कृतिकी स्थापना करना चाहता है। पर यह भी उसके आत्मज्ञानकी महत्ताको बढ़ाता ही है। वह भारतको दो तरहकी गुलामीसे जकड़ा पाता है। एक तरफ तो विदेशी शासनका भार है और उसके विरुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन चल रहा है और दूसरी ओर विदेशी पूंजीपतियोंका बोझ है, अर्थात्

आर्थिक प्रश्न जिसके द्वारा थोड़ोंके लाभके लिये बहुतोंका सर्वनाश किया जाता है। इस आर्थिक संकटसे भारतका उद्धार उतना ही आवश्यक है जितना विदेशी शासनसे। यदि शासन दूर हो जाय पर विदेशी पूंजीपतियोंका सिक्का ज्योंका त्यों जमा रहने दिया जाय तो भारतका उद्धार नहीं हो सकता। उनकी दशा वैसी ही रहेगी। गांधी पाश्चात्य सभ्यताको निर्जीव देखता है। वह उसमें प्राण नहीं पाता। यह सभ्यता हम लोगोंको खा रही है। इसने हम लोगोंको कुली बना दिया है, अर्थलोलुप बना दिया है, और आत्मज्ञानकी मर्यादासे गिरा भी दिया है। बाह्य शक्तिमें भी यह सफल:नहीं है, क्योंकि इसका अन्तिम परिणाम युद्ध होता है। इसने पश्चिमका तो संहार कर डाला। अब वह मुंह बाये एशिया खण्डकी ओर देख रही है और जापान और चीनपर आक्रमण कर रही है। गांधी देख रहा है कि भारत भी इससे प्रभावित हुआ चाहता है और वह उस सभ्यताका नाश करना चाहता है। मादक द्रव्योंका निषेध, चरखों और करघोंका प्रचार, यन्त्रोंका बहिष्कार, इसीके हेतु हैं। प्राचीन संस्कृति और सदाचारकी स्थापनाकर वह भारतको पाश्चात्य नाशकारी सभ्यताके प्रभावसे बचाना चाहता है। पूंजीके दुराग्रहसे वह इस पवित्र भूमिकी रक्षा करना चाहता है। इसमें उसका किसी प्रकारका निजी स्वार्थ नहीं है। वह अपने भाइयोंकी रक्षा करना चाहता है, उनकी सादगी, कला, धर्म, और सम्मेलनकी रक्षा करना चाहता है।

यही उसका धार्मिक महत्व है। उसका धार्मिक सुधार ही उसे विश्वव्यापी महत्व देता है। भारतके साथ ही साथ वह संसारके उद्धारकी चेष्टा कर रहा है। पूंजीपतियोंके अत्याचारको अपने देशमें रोकनेमें उसकी चेष्टाका असर सारे संसारपर पड़ेगा और इस तरह एक दिन हमें भी यह अमूल्य रत्न मिल जायगा जिसे हम खो बैठे हैं। वर्त्तमान पाश्चात्य सभ्यताकी वही दशा है जो सीज़रके युगमें रोमकी थी। शक्तिके प्रभावसे उसने संसारपर विजय प्राप्त कर ली है और अब अपने लाभके लिये संसारका रक्त चूस रही है। बाह्य विकासके साथ ही उसका आन्तरिक पतन हो रहा है। यही दशा रोमकी थी और उस समय ईसा मसीह तथा ईसाई धर्मका अवतार हुआ। इसने मृतकके जीवनमें प्राणका संचार किया, तड़पतेको शान्त किया और देशके प्राणकी रक्षा दो हजार वर्षतक करता रहा। इस समय भी वही युग उपस्थित हो गया है। इस समय भी गांधीका अवतार हुआ है। वह भी नयी शक्ति लेकर आया है। वह भी संसारको पतनसे बचावेगा।

इन कतिपय शब्दोंमें मैंने महात्मा गांधी और उसके कामोंकी महत्ता दिखलानेकी चेष्टा की है। इसकी तुलना ईसा मसीहके साथ उपयुक्त है। नजारिन अवतार था, उसने प्रेमका पाठ पढ़ाया और उसकी पूर्तिके लिये उसने सत्याग्रहकी शिक्षा दी। मेमनको हटाकर उसने इस संसारमें ही स्वर्ग बनाया। यही बात गांधीके साथ है, वह तपस्वी है, वह भी

प्रेम और सत्याग्रहकी दीक्षा देता है। यह भी नये प्रकारकी समाजकी स्थापना करना चाहता है जिसमें अध्यात्मकी प्रधानता रहेगी। यदि मुझे दूसरे अवतारपर विश्वास होता तो मैं दृढ़ताके साथ कहता कि गांधी प्रभु ईशुका अवतार ही है। ऐतिहासिक महत्व न स्वीकारकर कवियोंकी उक्तिके आधारपर भी यह कहना अनुचित न होगा कि गांधी प्रभु ईशुका अवतार है। पाल रिचार्डने मेरे पास प्रभु ईशुके सम्बन्धमें एक पुस्तक भेजी है, उसमें दो वाक्य बड़े ही महत्वके हैं—

"यदि प्रभु एक बार पुनः अवतार लें तो समृद्ध साम्राज्यकी प्रजा होनेकी अपेक्षा दासताकी घोर यातनामें तपाये जानेवालोंके ही बीच रहना वे अधिक पसन्द करेंगे।"

"यदि प्रभु अवतार लेंगे तो वे गोरी जातियोंमें नहीं क्योंकि काले लोग उनपर कभी भी विश्वास न करेंगे।"

क्या यह गांधीके लिये भविष्यवाणी नहीं है? क्या यह वर्तमान युगका ईसा मसीह नहीं है? उस युगकी भांति आज भी यह प्रश्न नहीं उठ सकता कि ईसा मसीह अमुक देश या स्थानमें हैं या नहीं। प्रश्न केवल मानने और अनुकरण करनेका है।

जान हाइन्स होम्स
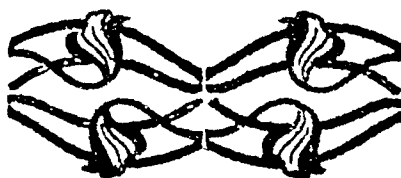
डबल्यु ग्रियर्सनके विचार

महात्मा गांधीके बारेमें व्यक्तिगत मतभेद हो सकता है। पर यह तो निर्विवाद है कि वह मार्केका मनुष्य है। उसमें इस बातकी भारी विशेषता है कि उसके सदाचारका आदर्श और काम करनेकी प्रणाली दूसरोंसे एकदम भिन्न है। जिस उद्देश्यसे वह काम करता है उसे शायद ही कोई नीतिज्ञ स्वीकार करे। साधारण राजनीतिज्ञोंके आचरणके प्रतिकूल चलकर भी देशवासियोंपर उसका प्रभाव उसे और भी विस्मयकारी बना देता है। भारतके पूर्वीय प्रान्तके किसी गवर्नरने उसके बारेमें कहा था—यह व्यक्ति पथभ्रान्त है और इस कारण भयानक तपस्वी है। दोस्त और दुश्मन सभी उसकी साधुताको स्वीकार करते हैं। और इसीके कारण इसका इतना अधिक प्रभाव है।

अमरीकाके एक पत्रमें लिखा था—गांधी संन्यासी है जिसने भारतमें ब्रिटिश शासनकी नाकोदम कर दिया है। एक साधारण संन्यासी आत्मबलके प्रभावसे ऐसे प्रभाव और शक्तिशाली साम्राज्यकी स्थितिको डांवांडोल कर दे, यही भारी बात है। जिस समय कनाटके ड्यूकने भारतकी यात्रा की थी उन्हें प्रान्त प्रान्तमें शहरोंकी सड़कें सूनी मिलीं। भारत सदाका भक्त है। जार्ज पंचमका उसने बड़ी धूमधामसे स्वागत

किया था। उसका इस समयका विपरीत आचरण आकस्मिक घटनाका द्योतक है। एक तरफ तो यह हाल और दूसरी तरफ जहां गांधी जाता है लाखोंकी भीड़ उसके दर्शनके लिये एकत्रित हो जाती है। दिल्लीमें जिस समय वह पहुंचा अस्सी हजारकी भीड़ केवल स्टेशनपर थी। शहरमें प्रायः एक लाखकी भीड़ थी।

इसका क्या कारण है—गांधीको भारतवासी केवल संन्यासी ही नहीं समझते बल्कि वह उनका राजनीतिक गुरु और नेता भी है। पर वह राजनीतिज्ञ नहीं है। नीतिज्ञोंके उसमें कोई गुण नहीं पाये जाते। वह चालबाज नहीं है, क्योंकि वह स्पष्टवादी है। वह दबना नहीं जानता। वह हमेशा सिद्धान्तके सहारे चलता है। समय और अवसरका विश्वासी नहीं, उसका कोई दल नहीं है और न वह दलबन्दीमें विश्वास करता है। निन्दा और कटाक्षसे वह कभी नहीं घबराता। उसने कहा है—मुझे अनेक धर्मज्ञोंसे मिलनेका अवसर मिला। मैंने उनमेंसे अधिकांशको धर्मके वेशमें राजनीतिज्ञ पाया। मुझे लोग राजनीतिज्ञ कहते हैं। पर मैं वास्तवमें धार्मिक जीव हूं।

चाहे उसका कोई भी उद्देश्य हो, उसका तपस्वीका जीवन ही भारतवासियोंको मोहित कर लेता है। और उसका जनतापर इतना अधिक प्रभाव है कि वह ब्रिटिश शासनका भयानक शत्रु समझा जाता है। प्रलोभन उसे डिगा नहीं सकता। जिस सिद्धान्तको उसने स्वीकार कर लिया उससे वह फिर पीछे

नहीं हटनेका; चाहे ऐसा करनेसे और अधिक लोगोंके उसके पक्षमें हो जानेकी सम्भावना हो। कुछ लोगोंका ख्याल है कि अपने सन्निकटवर्तीकी बातोंमें वह जल्दी आ जाता है और गरमदलवाले उसकी ख्यातिका लाभ उठाकर अपना मतलब हल कर रहे हैं। पर सच्ची बात यह है कि बाहरी दबावका जितना कम असर महात्मा गांधीपर पड़ता है उतना कम मैंने और किसीपर पड़ते नहीं देखा। जिस समय मुझे पहले पहल महात्मा गांधीसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, मुझे इस बातका एक ज्वलन्त प्रमाण मिला।

१९१३ का जमाना था। दक्षिण अफ्रिकाके उपनिवेशोंमें भारतीयोंके साथ दुर्व्यवहारके कारण हलचल मच रही थी। गांधी कई वर्ष पहलेसे ही भारतीयोंको दक्षिण अफ्रिकामें ब्रिटिश साम्राज्यके सफेद जातियोंके साथ बराबरका अधिकार दिलानेका यत्न कर रहा था। इसके लिये उसने अपनी चलती वकालत छोड़ दी। १९१३ में यूनियन सरकारसे अपनी मांग पूरी करानेके लिये उसने सत्याग्रह किया। उसने अपील की और हजारों नरनारी बाल, युवा, वृद्ध विना किसी आज्ञापत्रको लिये नेटाल छोड़कर ट्रान्सवाल चले आये। और कितनोंने ही खानों और चीनीके कारखानोंमें हड़ताल कर दी। सरकार सत्याग्रहियोंको पकड़ २ कर जेलखाने भेजने लगी। हजारों पकड़े गये। जेलखानेमें जगह न रही। खानें ही जेलखाने बनाई । स्वयं महात्मा गान्धी और उसके समर्थक दो तीन अंग्रेज

भी बन्दी कर लिये गये। इस समाचारसे भारतमें घोर आन्दो-लन उठा। उस समयके बड़े लाट हार्डिञ्ज साहबने अपने मद्रासके भाषणमें इस दुर्व्यवहारका घोर प्रतिवाद किया। भारतके नगर २ में विरोधक सभायें हुईं। भारत और विला-यत सरकार डर गई। अफ्रीकाकी सरकारने साम्राज्यपर आपत्ति आते देख भारतीयोंके दुःखकी जाँच करनेके लिये एक कमीशन नियुक्त की; पर इसमें भारतीयोंके एक भी प्रतिनिधि नहीं थे। और न उनसे सलाह ही ली गयी। महात्मा गांधीने इसका विरोध किया और कहा कि कमसे कम एक प्रतिनिधि भेजनेका हमें अधिकार मिल जाना चाहिये। पर सरकारने अस्वीकार किया। गांधीने सूचना निकाली कि ऐसी अवस्थामें न तो मैं कमीशनके सामने गवाही दूंगा और न किसी आत्मा-भिमानी भारतीयको सलाह दूंगा।

इससे कमीशनका उद्देश्य सिद्ध न होता और भारतीयोंकी आकांक्षाओंके विरोधियोंको यह कहनेका अवसर मिल जाता कि उनका पक्ष कमजोर था इसीसे उन्होंने गवाही नहीं दी। उस समयके कुटिल राजनीतिज्ञ गोखलेने इसका अनुभव किया। उन्हों-ने महात्मा गांधीके पास बार २ तार भेजकर अपने निर्णयपर पुनः विचार करनेकी प्रार्थना की। महात्मा गोखलेने भली भाँति समझ लिया था कि कमीशनके बहिष्कारका प्रभाव इङ्गलैंड और दक्षिण अफ्रीकामें भारतके प्रतिकूल होगा। गांधीकी महात्मा गोखलेमें बड़ी श्रद्धा थी पर वह अपने मतपर दृढ़ रहा। उसकी

समक्षमें इज (गवाही देने) से भारतीयोंके आत्मगौरवमें धक्का लगता था। वह यह जानता था कि उसका कार्य उसके परम प्रिय मित्रके प्रतिकूल था और राजनीतिक दाँवपेंचके बड़ी अनुकूल था पर वह पीछे न हटा। कमीशनके सामने न तो गांधीने गवाही दी और न किसी अन्य भारतीयने।

यह सिद्धान्तवादिताका अनन्यतम उदाहरण था। जहाँ मर्यादाका प्रश्न हो गांधी एक तिल भी पीछे हटनेवाला मनुष्य नहीं। तबसे लेकर भिन्न २ अवसरोंपर उसका मुझे परिचय मिला है पर भारतकी मान मर्यादाकी हानि होते देख वह किसी तरहका समझौता करते नहीं देखा गया। उसके इन्हीं गुणोंको कुछ लोग दोष बतलाते हैं। वे कहते हैं कि किसी अज्ञात आदर्शकी पूर्तिके लिये वह वर्त्तमान लाभकी कुछ परवा नहीं करता और उसे त्याग देता है पर इसीमें उसकी शक्ति है क्योंकि जिन्हें उसके साथ वर्त्तना पड़ता है वे पहलेसे ही इस बातको समझ लेते हैं कि अपने निर्णयसे वह एक कदम भी पीछे हटनेवाला आदमी नहीं है। हमारा उसका मतभेद हो, हमलोग उसकी कार्यप्रणालीको भले ही पसन्द न करें, पर इतना तो निश्चय है कि उसे व्यक्तिगत लाभ और नामकी कोई परवा नहीं है।

उसका चेहरा रोबीला नहीं है। तपस्वी होनेसे स्वभावतः वह दुबला पतला है। वह सिद्धान्तोंकी सजीव मूर्ति है। जिस समय वह बोलने लगता है उसका शरीर गणनाके बाहर है। जिस समय मुझे उसका प्रथम बार दक्षिण अफ्रीकामें दर्शन

हुआ वह केवल एक बार फल, नारियल और रोटीके साथ जैतून-का तेल खाता था। वह बहुत कम सोता था। सुबहसे लेकर रातको देरतक वह काम करता था। लोगोंसे बातें करता, दल-साजता, भारत तथा प्रेटोरिया सरकारके पास सूचनायें लिख-कर भेजा करता। इतना व्यस्त रहते भी वह साधारणसे साधा-रण आदमीसे बातें करता और उनकी सुनता। वह प्रायः लोगोंको भोजनके समय बुलाकर बातें करता। गरीबसे गरीब भी इस बातका अभिमान रखते थे कि वह उनका मित्र और सहायक है। जिस समय वह जेनरल स्मट्स और बोथासे मिलने गया, उसके पांव नंगे थे और शरीरपर खादीका एक वस्त्र था। उसके चेहरेसे धैर्य और प्रेम बरसता है। उसकी तुलना हम केवल असीसीके सेण्ट फ्रैन्सिससे कर सकते हैं। उसका विश्वास है कि जो लोग घृणाको प्रेम द्वारा मिटानेकी चेष्टा करते हैं, अन्तिम विजय उन्हींकी होती है। जो लोग उसके देशवासियोंके प्रति अनुचित व्यवहार करते हैं उनसे भी घृणा करनेको वह नहीं कहता। आत्मबलके प्रभावसे ही वह अपनी संगत और उचित मांगोंको पूरी करवानेकी चेष्टा करता है।

वह सबको सत्यवादी बनाना चाहता है। अपने अनुयायि-योंको सदा इसी बातकी शिक्षा देता रहता है। यद्यपि भिन्न मत-वालोंके साथ उसका बर्ताव बड़ाही सरल और नम्र होता है, पर जो उसके साथ हो चुके उनपर वह कड़ी सदाचारिक निगाह रखता है। मानव समाजकी सेवाके लिये वह ब्रह्मचर्यको

नितान्त आवश्यक और अनिवार्य समझता है, इसलिये अपने अनुयायियोंको वह सदा ब्रह्मचारी बने रहनेकी शिक्षा देता है। वह कट्टर शाकाहारी है, पर जब मैं एक बार बीमार पड़ गया था उसने मुझे मांस खानेकी सलाह दी थी।

वह सच्चा वीर है। वह अपने शत्रुओंकी कमजोरीसे लाभ उठानेकी कभी चेष्टा नहीं करता। वर्त्तमान आन्दोलनमें भी दो तीन बार उसने इस गुणको प्रगट किया है। एक उदाहरण देता हूं। १९१४ में वह अफ्रिकाकी जेलसे मुक्त हुआ। उस समय रैण्डके सफेद कुलियोंने भीषण हड़ताल कर दी थी। इसके एक सप्ताह पहले ही उसने सत्याग्रह आन्दोलनको पुनः चलानेकी घोषणा की थी क्योंकि कमीशनमें भारतीयोंको स्थान नहीं मिला था। पर इस अवसरसे उसने लाभ न उठाया। उसने सूचना दे दी कि जबतक रैण्डकी घटनाके कारण सरकारकी स्थिति ठीक न हो जाय, सत्याग्रह स्थगित किया जाय। यदि उस समय वह चाहता तो सत्याग्रह आरम्भकर सरकारको लाचार कर देता और अपना अभीष्ट सिद्ध कर लेता। पर वह सच्चा वीर था और जेनरल स्मट्सने भी इसका उचित सम्मान किया, क्योंकि बादको जब भारतका प्रश्न उठा तो उन्होंने उसपर उचित ध्यान दिया। इसमें राजनीतिक चालें न थीं। यह निष्कपट युद्धका एक नमूना था। इसका परिणाम सुखद हुआ। १९१४ के अन्ततक भारतीयोंकी उचित मांगे पूरी की गईं और उपनिवेशोंमें उनके साथ उचित व्यवहार होने लगा।

यह तो हुई उसकी दक्षिण अफ्रीकाकी गाथा, पर उसके जीवनपर पूर्ण प्रकाश डालनेके लिये उसके गार्हस्थ्य जीवनकी कुछ बातें लिखनी आवश्यक होंगी।

डर्बनके पास उसकी कुछ जमीन थी, जिसमें वे लोग रहते थे जिनका उद्देश्य सेवाधर्म था। यह स्थान फोनिक्सके निकट था। वहांपर गांधी निःस्वार्थ जीवन व्यतीत करता था। वह टालस्टायका परम भक्त और उसके सिद्धान्तोंका अनुयायी है। वहां वह उन्हींके आदर्शोंके अनुसार जीवनयात्रा चलाता था। सत्याग्रह सिद्धान्तमें भी वह महात्मा टालस्टायका सहारा लेता है, यद्यपि वह भारतके अहिंसा मतका प्रतिपादक और कट्टर अनुयायी है।

वहांपर वह अन्य जातियोंके लड़कों और बूढ़ोंके साथ काम करता था। वह साधारणसे साधारण काम भी अपने हाथों करता। कभी कभी मैं यह कहकर इसका विरोध कर बैठता कि "यह काम तो यहांके साधारण निवासी कर सकते हैं, फिर आप अपना अमूल्य समय इसके करनेमें क्यों नष्ट करते हैं, जब आपको अन्य उपयोगी काम करना है।" जिस समय स्वर्गीय गोखले फोनिक्समें महात्माजीके साथ ठहरे रहे, महात्माजी उनकी सारी परिचर्या, झाड़ू बुहारूतक अपने हाथ करते। इसके लिये स्वर्गीय गोखलेको दुःख होता और कभी कभी हंसीमें कह भी देते कि "महात्माजी, यह आप हमारे ऊपर अत्याचार कर रहे हैं" इसका उत्तर यों देते—"जो काम किया

जाना आवश्यक है, उसके लिये ऊंच नीचका ख्याल व्यर्थ है। यदि कोई काम मेरे लिये घृणित है तो वह उस बिचारे मेहतरके लिये और घृणित होना चाहिये, क्योंकि वही जीवात्मा उसके देहमें भी वर्तमान है।"

जो काम वह दूसरोंसे करवाना चाहता है उसे वह स्वयं कर दिखाता है, और उसकी शक्तिका यही रहस्य है। किसी भारतीय लेखकने लिखा है:—

"महात्मा गांधी अपने सिद्धान्तोंके परिणामको स्वीकार करनेके लिये और भोगनेके लिये सदा तैयार और सन्नद्ध रहते हैं। चाहे उसमें उन्हें कितनी ही कठिनाई और सामाजिक क्षति उठानी पड़े, उनकी सदिच्छा, सादगी आत्मत्याग और सार्वजनिक सेवा लोगोंके दिल लुभा लेती है। यही कारण है कि जनतापर उनका इतना प्रबल प्रभाव है। राजनीतिक चालों और बनावटपनसे यह बातें नहीं सिद्ध हो सकतीं।"

जातिसेवाके लिये उसने १५ हजार डालरकी मासिक वकालतपर लात मारी। यह उसी सदिच्छाकी प्रेरणासे था जिसने असीसीके सेण्ट फ्रांसिस और टालस्टायको वशीभूत किया था। जनताकी सेवा करनेके लिये दरिद्रताका जीवन बिताना आवश्यक समझकर उसने उसे अंगीकार किया, पर वह अपना अनुकरण करनेके लिये किसीको नहीं कहता। उसके अनेक कट्टर अनुयायी बड़े ही समृद्ध हैं। अफ्रिकामें जिस समान अधिकारके लिये उसने सत्याग्रह संग्राम किया था, उसकी

प्राप्ति वह केवल भारतीयोंके लिये ही नहीं बल्कि मानव-समाजके लिये नितान्त आवश्यक समझता है। पर न्याय करानेके लिये जिस सरकारके साथ वह युद्ध कर रहा था, समय समयपर उसीके साथ उसने सहयोग भी किया है। बोअर युद्ध और जूलू-विद्रोहमें स्वयंसेवक संगठनकर उसने अफ्रीका सरकारकी सहायता की और दोनों अवसरोंपर उन्हीं सेवाओंके लिये उसे तमगे मिले थे। भारत-सरकारने भी उसके उन कामोंसे प्रसन्न होकर उसे कैसर-ए-हिन्दका सोनेका तमगा प्रदान किया था। उसका ख्याल था कि वह लोगोंको यह समझा सकेगा कि भारतवासी भी आपत्तिसे डरानेवाले नहीं हैं। वे सदा तैयार रहते हैं और इस प्रकार उनके लिये कुछ कर देगा। अमृतसरके हत्याकाण्ड और तुर्कोंके साथ सन्धि करनेमें सरकारने जो उपेक्षा दिखलाई उसके विरोधमें उसने सब तमगे आदि लौटा दिये। अबतक तो उसका ब्रिटिश न्यायमें विश्वास था पर अब वह उठ गया।

कितने ही अंग्रेजोंका मत है कि गांधी कुटिल राजनीतिज्ञ है और सन्यासकी आड़में वह अपना मतलब हल करता है। यह निर्विवाद है कि जो कुछ इसने कर दिखाया है कोई भी भारतीय नेता नहीं कर सका है। उसने सारे भारतको एक तन्तुमें बांध रखा है और सबका एक लक्ष्य बना दिया है। स्वर्गीय गोखलेको भी इतनी सफलता नहीं मिल सकी थी, कारण कि वह तात्कालिक फलाफलपर ही अधिक ध्यान देते रहे।

गांधीने सबके हृदयमें उसी राजनीतिक भावका उदय कर दिया है कि जिसके बारेमें सर जान सिलीने अपनी पुस्तक "इंग्लैंडका विकास" में भारतके प्रसंगमें लिखा है:—

"यदि भारतके राष्ट्रीय आन्दोलनने वही रूप धारण किया जो इटलीके आन्दोलनने धारण किया था तो निश्चय जानिये कि इंग्लैंड उसका उतना सामना भी न कर सकेगा जितना आष्ट्रियाने किया था और उसे मात खाना पड़ेगा।"

बहुत दिनोंतक उसका शनैः विकासपर विश्वास था और इस कारण वह सरकारसे सहयोग करता आया। पर अन्तमें लाचार होकर उसे अपना विचार बदलना पड़ा और उसको यह कड़ा सिद्धांत स्वीकार करना पड़ा। उसने लोगोमें यह भाव पैदा कर दिया है कि विदेशी शक्तिके अधीन रहना हेय और लज्जा-जनक है। सर जान सिलीने लिखा है:—

"यदि एक राष्ट्रीयताका भाव भारतीयोंके हृदयमे जग जाय, यदि उनके दिलमें केवल एक ही बात समा जाय कि विदेशी जुएके अन्दर रहना शर्मकी बात है तो विना किसी अन्य प्रयास-के ब्रिटिश-शासनका अन्त हो जायगा।"

अभी हालमें सर माइकल ओडायरने लण्डनके किसी पाक्षिक पत्रमें लिखा है:—

"गदरके वादसे इस प्रकारका नीचा ब्रिटिश सरकारको कभी नहीं देखना पड़ा था और न उसकी स्थिति ही ऐसी डांवांडोल

हुई थी। एक तो योंही भारतमें हम लोगोंकी स्थिति चिन्ता-जनक रहती है, आज संसार-संकटके समय वह एकदम भयावह हो गई है।"

पर यदि वाह्य स्थिति जनताको यह बात न दिखलाती कि विदेशी शासन असह्य होता जा रहा है तो गांधीको ऐसी अवस्था उपस्थित कर देना सहज नहीं था। प्रायः बीस वर्षसे लोगोंके हृदयमें शासनमें अधिकाधिक भाग लेनेकी आकांक्षा उत्पन्न हुई है और उसकी प्राप्तिके लिये अनेक तरहकी चेष्टायें भी की गई हैं। राष्ट्रीय महासभाका संगठन, बंगालका स्वदेशी आन्दोलन, लोक-मतकी उपेक्षा, इधर लार्ड कर्जनका बंग भंग और उसके बाद जो कुछ हुआ, आर्यसमाज तथा रामकृष्ण मिशन आदि धार्मिक संस्थाओंकी स्थापनाने जनताको शिक्षितकर उसे अपने अधिका-रोंका ज्ञान करा दिया। पर उसकी जड़तक यही असहयोग आन्दोलन ही पहुंच सका है। उसने दिखला दिया है कि सर-कारके साथ सहयोगकर हम लोग केवल उसकी पुष्टि कर रहे हैं। प्रजाके सहयोग बिना कोई भी सरकार नहीं टिक सकती। सिलीका कथन चरितार्थ होनेको है और यह केवल इस एक व्यक्तिके कारण है। इण्डिया पत्रमें किसीने लिखा है:—

"महात्मा गांधी रोगको समूल नष्ट करता है। वह जर्राहोंकी तरह चीरा लगाकर समूल नष्ट करना चाहता है न कि हकीमकी तरह दवा देकर ठंढक पहुंचानेकी चेष्टा करता है। पर घावके साथ ही साथ हमें सेहत मिलने लगती है।

भारतमें अभूतपूर्व मेल हो गया है। यह केवल गांधीके तपस्वी जीवन और निष्कपट व्यवहारका फल नहीं है बलिक सरकारी नीतिका, जो राष्ट्रीयताकी अग्निमें सदा आहुति देकर उसे प्रज्वलित करती गई है। आज उसने सबसे शक्तिशाली राष्ट्रका सामना किया है। उसे अपने लिये कुछ नहीं चाहिये। अपने सिद्धान्तोंका वह अचल और निर्भय प्रतिपादक है। वह कहता है कि इस सरकारने अपना विश्वास और मर्यादा खो दी इसलिये इसके साथ किसी प्रकारका संबन्ध सम्भव नहीं। उसका सिद्धांत है,—घृणापर प्रेमसे अधिकार जमाओ, बलपर अधिकारसे विजय करो। वह सदा भारतीयोंको सत्यवादी बननेका आदेश देता है। (एशियन रिव्यूसे)

पर्सिवल लौण्डनके उद्गार

कल मैं महात्मा गांधीसे मिला और घंटोंतक बातचीत करता रहा। जिस सिद्धान्तके प्रचारमें वह तन मनसे लगा है उसके संबन्धमें मैंने अपना मत स्थिर कर लिया। जितनी मुझे आशा थी उससे कहीं अधिक मुझे सन्तोष हुआ। बम्बईमें किसी विद्वानने मुझसे कहा था:—"महात्माजीके इस धार्मिक आन्दोलनका तत्व समझनेके लिये पहले महात्माजीको पहचानना आवश्यक है। जिन लोगोंने इस असाधारण और भयानक मनुष्यको नहीं देखा है वे मेरी बातोंको सुनकर आश्चर्य करेंगे। वह अकेला काम करता है। उसे सहायकों और अनुयायियोंकी आवश्यकता नहीं जो कि उसे अपने अपने मतोंसे—व्यवहारकी दृष्टिसे—तंग किया करें, जबकि वह उदारनीतिकी शिक्षा और प्रचार चाहता है। उसको इसकी कोई परवा नहीं कि उसका साथ कौन देता है और कौन नहीं। उसका सहारा सर्वसाधारणका है और उसके इस अतुलनीय प्रभावका यह कारण है कि वह प्रेम और दयाके आधारपर स्वर्ण-युगकी स्थापना करना चाहता है। उसकी शिक्षा आत्मशुद्धिके लिये होती है, वह आधिपत्यका विरोधी है इसीलिये उसकी समता कोई नहीं कर सकता, उसका देवतुल्य आचरण भी अद्वितीय है और यदि उसके प्रयत्न असफल हुए तो वह भी अभूतपूर्व होगी।

जिस समय मैं उसके पास गया वह साधारण कोठरीमें फर्शपर खादी लपेटे बैठा था। मुसकराकर उसने मेरा स्वागत किया। उसके चेहरेकी गढ़न आदर्श नीतिज्ञोंकी नमूना थी। उसकी आंखोंमें दयाके भाव भरे थे। बाल पक चले हैं। उसकी आवाज़ बड़ी मीठी है, और उसमें एक प्रकारकी मोहनी शक्ति है जिससे उसके जीवनका उद्देश्य—जनताको शिक्षित करना—सर्वथा सिद्ध होता है। उसके चेहरेपर शिकन, आंखोंमें घृणाके भाव, भौंहोंपर तनेनें आते किसीने नहीं देखा है। वह ईसा मसीहके इस सिद्धान्तको पूर्णतः चरितार्थ करता है—"यदि कोई तुम्हें बायें गालपर मारे तो उसके सामने दाहिना गाल भी कर दो।" उसके सिद्धान्तोंका आधार ईसा मसीहकी शिक्षा है जिनमें वह आरम्भ कालसे ही श्रद्धा रखता आया है और उसके बाह्य आचरणपर भी उसीका प्रभाव पड़ा है। बातचीतमें उसने एक बात ऐसी कही, जिससे पता लगता है कि ईसा मसीहके प्रति उसके क्या भाव हैं। मैंने कहा—"ईसा मसीहने राजनीतिमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं किया।" इसके उत्तरमें गांधीने कहा—"यह बात सर्वथा ठीक नहीं है। यदि आपका कहना सत्य मान लें तो मैं यही कहूंगा कि ईसा मसीहमें यही कमजोरी थी।"

आत्मत्यागके आदर्शको लेकर सत्य और प्रेमके आधारपर जिस साम्राज्यकी स्थापनाकी ईसाई-धर्म शिक्षा देता है और जिसे ईसाई-धर्मावलम्बी राष्ट्र असम्भव समझ बैठे हैं, गांधीके लिये सत्य प्रतीत होता है।

उदारता और शिष्टताके साथ साथ उसमें दृढ़ता भी कूट कूटकर भरी है। बातचीतमें उसने अपने विश्वासकी बात कही जिसे सुनकर मुझे यह दृढ़ हो गया कि अङ्गरेजोंसे और इससे समझौता होना कठिन है और ब्रिटिश शासन और उनकी सभ्यता—जिससे वह घृणा करता है—अवश्य उठ जायगी। मैंने उससे कहा—"भारत अरक्षित हो जायगा और दूसरे विदेशी शत्रु यदि उसपर आक्रमण करेंगे तब तो सारा बना बनाया काम चौपट हो जायगा।" उसने कहा—

"यदि भारत ब्रिटिशको निकाल बाहर कर सकता है तो वह अपनी रक्षा भी कर सकता है। विश्वप्रेम तथा आत्मबलसे हम अपने पास किसीको नहीं फटकने देंगे। सांग्रामिक तैयारी ही शत्रुके कान खड़े कर देती है।"

फिर मैंने पूछा—"हिन्दू-मुसलीम धार्मिक विद्वेषका क्या होगा?" उसने कहा—"उसके लिये कोई चिन्ता नहीं।"

उसी समय मुझे एक बात याद आ गई। मुझे पंजाबमें एक मुसलमान मिले थे। वे भी महात्मा गांधीके कट्टर अनुयायी थे, बातचीतमें उन्होंने मुझसे कहा था,—"हमलोग तो उस समयकी प्रतीक्षा कर रहे हैं जब भारत विदेशियोंके हाथसे बाहर हो जाय। फिर क्या, हमलोग हिन्दुओंको दबोचकर सारे भारतमें फिर एक बार मुसलिम साम्राज्यकी स्थापना करेंगे।" इसी विषयपर मैंने दूसरा प्रश्न किया। उत्तर मिला—

"यदि ऐसा समय आया तो मैं उसे भी स्वीकार करनेके लिये

तैयार हूं। यदि इस प्रकारके संग्राममें सारा भारत गारत हो जायगा तोभी अच्छा ही होगा क्योंकि यह इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण होगा कि भारत बुराइयोंसे भरा था।"

मैंने लेनिनके संबंधमें पूछा, उसने उत्तर दिया—"मुझे लेनिन और उसके सिद्धान्तोंको पूर्णरूपसे अध्ययन करनेका अवसर नहीं मिला है पर मैं इतना तो अवश्य ही कहूंगा कि ब्रिटिश शासनसे मैं उसे अच्छा समझता हूं।" यदि ऊपरके वार्तालापसे इस वाक्यको हटाकर अलग कर दिया जाय तो वे दोष जो महात्माजीके ऊपर आरोपित किये जाते हैं सत्य प्रमाणित होंगे।

पर इतना तो मैं भली भांति समझ गया कि महात्मा गांधीके इन विचारोंका जड़ वही आदर्श है। इस बातपर मैं उससे सहमत हो गया कि पूर्वीय संस्कृतिमें पाश्चात्य सभ्यताका एकीकरण नहीं हो सकता। पर मैंने पूछा—"क्या अङ्गरेजोंमें एक भी गुण देखनेमें नहीं आता।" उसने उत्तरमें कहा—"मेरा आन्दोलन किसी व्यक्तिविशेषके प्रतिकूल नहीं है। कितने ही अंग्रेजोंने निःस्वार्थ भावसे भारतकी भलाईके लिये काम किया है, इनमें ब्रैडला, गारडाइन, वेडरबर्न और माण्टेग्यूका नाम उल्लेखनीय है।" इसपर मैंने फिर पूछा,—"फिर आप शासनसुधारका वहिष्कार क्यों करते हैं।" उसने उत्तर दिया—"जिनके हाथोंमें इसके प्रयोगका भार सौंपा गया है उन्होंने इसकी उपयोगिताको निष्फल कर दिया है। कौंसिलोंमें जाकर हमलोग कोई भी उप-

योगी काम नहीं कर सकते ।" इससे मेरी समझमें दो ही बात आई, या तो उसे इस बातका भ्रम है कि इस तरह उसका असहयोग आन्दोलन व्यर्थ हो जायगा या वह अभी नरम दल-वालोंके साथ किसी तरहके समझौतेके लिये तैयार नहीं है। आधुनिक आसुरी सभ्यताका निदर्शन वह रेलों और तार घरोंको बतलाता है पर उनका प्रयोग वह स्वयं करता है और ऐसा करनेका आधार वह प्रचार बढ़ानेका उद्देश्य बतलाता है। यह उसके राजनीतिक आन्दोलनके संगठनकी कमजोरी है।

वर्त्तमान सभ्यताके प्रति उसके घृणितभाव उसके आन्दो-लनकी प्रौढ़ता और दुर्बलता दोनोंके द्योतक हैं। उसने इस बातको स्वीकार किया कि स्वास्थ्य और संगठनमें ब्रिटिश शासन सराहनीय है। पर वह इस बातको स्वीकार नहीं करता कि यही कारण है कि भारतपर ब्रिटिश शासन आवश्यक है। पर उस समय वह भूल जाता है कि भारतने इस बातकी चेष्टा की थी पर सफलता प्राप्त न हुई। गांधी सदा उस युगका सुखस्वप्न देखता है जिसकी स्थापनाके लिये चौबीस सौ वर्ष पहले गौतम बुद्धने चेष्टा की थी पर वह भी मनुष्यकी प्रकृतिमें अन्तर न डाल सका।

अन्तमें मैंने उससे पूछा,—"आपका आन्दोलन अहिंसात्मक तो रह नहीं सकता और उसके कारण शान्तिभंग अवश्य होगी, फिर उसके जिम्मेदार भी आपही होंगे।"

उत्तरमें उसने कहा—"यदि ब्रिटिश सरकार अग्रसर न हुई

तो कुछ नहीं होनेका।" यह तो एक तरहकी बहानेबाजी सी थी। अस्तु, मैंने उससे पूछा—"क्या आपने कभी कहा था कि हालमें बिहारमें शान्तिभंग करनेके लिये वहांकी सरकारने जनताको उत्तेजित किया था।" उसने मुस्कुराकर उत्तर दिया—"नहीं, कितनी ही बातें इसी प्रकार फैला दी जाती हैं जिनको मैंने कभी भी जबानसे नहीं निकाला।".

मेरे हृदयमें उसके प्रति निम्नलिखित भाव पैदा हुए—"यह पका आदर्शवादी है, भारतवासी इसे ईश्वर मानते हैं पर जिन गुणोंके कारण वह पूजनीय हो रहा है, उनका अन्तिम परिणाम अशान्ति और रक्तपात होगा।"

भारतका तपस्वी

भारतवर्ष अराजकताकी ओर बढ़ रहा है। भारतकी वर्त्तमान दशाका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये पहले महात्मा गांधीको समझना आवश्यक है और तब जनताको जिन्हें वह बना बिगाड़ रहा है। भारतकी जनता उसके चरणोंकी राख हो रही है। शिक्षित समाजका उससे मतभेद अवश्य है पर खुले तौरसे नहीं। धन और सम्पत्तिका वह शत्रु है और सरकार तो उससे थर थर कांपा करती है, क्योंकि वह प्रत्येक सरकारकी जड़ खोदनेकी चेष्टा करता है।

जिस समय मैं उससे अन्तिम बार मिलने गया वह चटाई-पर बैठा साधारण भात खा रहा था और उसको घेरे लोग बैठे थे। उसके बदनपर मोटे साधारण कपड़े थे। पहुंचते ही उसने मुझसे पूछा—"श्रीमती वेजवुडको क्यों नहीं लाये?" मेरा उन्हें साथ न ले जाना ही अच्छा था क्योंकि जहां सब लोग नंगे पांव ज़मीनपर बैठे हों वहां बूट, सूट, डांटकर कुर्सीपर बैठनेमें शर्म मालूम होती है।

उसमें सबसे विशेष गुण यह है कि वह अपनी आवश्यक-ताओंको घटाता जाता है। उपवास रखकर वह मनफेर कर

लेता है और अपने अनुयायियोंको भी यही आदेश देता है। उसका शरीर इतना दुबला पतला और हलका है कि बच्चोंकी तरह उसे उठा लिया जा सकता है। और उसकी प्रकृति भी बालकोंकी ही भांति गम्भीर और सरल है। उसके इन्हीं गुणोंपर भारतवासी मुग्ध हैं। ईसा मसीहके साथ उसकी तुलना करनेमें जरा भी संकोच नहीं प्रतीत होती। लोगोंका ख्याल है कि अपने समझदार और पढ़े लिखे अनुयायियोंको ईसा मसीहने भी इसी तरहसे अनेक प्रकारके कष्ट दिये थे। गांधी तात्विक अराजक है। इसे टालस्टायका अवतार समझिये। बल्कि किसी किसी अंशमें वह टालस्टायसे भी बढ़ गया है।

उसने मुझसे कहा कि जिस समय मैं पहले पहल विलायत पहुंचा, समाजमे प्रवेश करनेके लिये मैंने नाचना सीखा। बाल्यवस्थासे ही उसे सत्याग्रहपर कुछ विश्वास होने लगा था। उसने रस्किनकी "अण्टू दि लास्ट," पुस्तक पढ़ी। इससे उसके चरित्रमें बड़ा परिवर्तन आ गया। नाचना तो एकदम बन्द हो गया और साथ ही साथ पाश्चात्य सभ्यताके प्रति एक प्रकारकी घृणा उत्पन्न हो गई। बादको उसने टालस्टाय रचित "दि किंगडम आफ हेविन इज विदिन यू" पढ़ा। और अपनेको उसीके योग्य बनाया। इस सदीके आरम्भ कालमें वह दक्षिण अफ्रीकामें वकालत करता था पर वह वकालत नाममात्रको थी और धीरे धीरे उसका लोप हो गया और उसके स्थानपर ट्रांसवाल और नेटालके जेलखानोंको उसने अपने अनुयायियोंके साथ सुशो-

भित किया। यदि सरकारके अत्याचार और किसी उपायसे बन्द न हों तो उसके प्रति उदासीनता दिखलाना—उससे असहयोग करना —ही अन्तिम उपाय है। इस शस्त्रका जन्म उसने दक्षिण अफ्रीकामें दिया। यह अस्त्र अमोघ और महा भयंकर है पर इसका प्रयोग वे ही कर सकते हैं जो सर्वस्व गंवा देनेके लिये तैयार हैं। भारतके राष्ट्रीय दलवाले इस शर्तको अब धीरे धीरे समझने लगे हैं और यही कारण है कि वे अब पीछे हट रहे हैं। पर इससे महात्माजीको जरा भी दुःख नहीं है। वह तीन बार जेल जा चुका। एक बार तो उसके अनुयायियोंने ही–इस भ्रममें पड़कर कि उसने उन्हें धोखा दिया—उसे खूब पीटा और बेदम कर छोड़ दिया था। दक्षिण अफ्रीकामें उसने "इण्डियन होमरूल" नामकी पुस्तक लिखी और उसीके सिद्धान्तोंका प्रचार करना आरम्भ किया। उसका मत है कि "यदि आप ब्रिटिश शासनका अन्त करना चाहते हैं तो उसके जड़पर ही कुठाराघात कीजिये; अर्थात् उससे असहयोग कीजिये, सरकारी स्कूलोंका वहिष्कार कीजिये, अदालतोंके इन्द्रजालमें मत फंसिये, वकालत छोड़िये और जेल जानेके लिये तैयार रहिये। पाश्चात्य सभ्यताने हमें चरित्रभ्रष्ट कर दिया। असहयोग अस्त्र ही इसे दूर कर सकता है।" वह पाश्चात्य सभ्यताका जितना प्रबल शत्रु है उतना पाश्चात्य शासनका नहीं। पाश्चात्य विलासिता और चमक दमकको भी वह घृणासे ही देखता है। वह हाथसे काते सूतसे तैयार की हुई मोटी खादी पहनता है। इसका

भोजन इतना सादा होता है कि जेलमें भी उसे किसी प्रकारका कष्ट नहीं हो सकता।

यही कारण है कि देशमें उसका इतना प्रबल प्रताप है। और सरकार उससे दिन प्रतिदिन भयभीत होती जा रही है। उसके एक शब्दपर अभिभावकोंकी परवा न कर लड़के पढ़ना लिखना छोड़कर उसके अनुयायी हो जाते हैं। शिक्षाकी आवश्यकता अनिवार्य है पर वर्त्तमान पाश्चात्य प्रणाली हमारे मस्तिष्कको खराब कर देती है। पण्डित मालवीय इसका विरोध करेंगे पर काशी विश्वविद्यालय भी कौंसिल आदिकी भांति पाश्चात्य संस्कृतिसे रंगा है और पाश्चात्य सरकारका अस्त्र है। इसमें मत जाओ। भारत वर्षके राजनीतिज्ञ, जो पंजाबके मार्शल लाके अनुभवोंसे हताश हो चुके थे, इनसे अलग हो गये और कौंसिलों-को माडरेटोंके हवाले कर दिये। सभी गरम दलवाले इससे सहमत नहीं हैं पर उसकी आज्ञा सबको शिरोधार्य्य है। जितनी कम श्रद्धा उसकी कुलीनतन्त्रमें है उतनी ही कम प्रजा-तन्त्रमें है। यदि उसे कहीं सफलता नहीं मिली तो केवल वकीलोंके वकालत त्यागने और सरकारी नौकरोंके सरकारी नौकरी छोड़नेमें। केवल अपढ़ जनताके "महात्मा गांधीकी जय" घोषसे वह पाश्चात्य सभ्यता या शासनका मटियामेट नहीं कर सकता और न तो अकेला वह अराजकता ही स्थापित कर सकता है। इस काममें उसके दो सहायक हैं, एक ओर तो मतवाले मुसल्मान और दूसरी ओर अदूरदर्शी सरकार जो प्रतिष्ठाके भ्रममें क्षमा नहीं मांग सकती। (कर्नल वेजवुड)

संसारका उद्धार इन्हींसे होगा।

प्रश्न—महात्मा गांधीके बारेमें आपकी क्या राय है?

उत्तर—उनके लिये मेरे हृदयमें बड़ा सम्मान है। वे अद्वितीय पुरुष और महान् आत्मा हैं।

प्र०—आज इस देशकी करोड़ों सन्तानोंपर उनका असीम प्रभाव है। इसका क्या कारण हो सकता है?

"आत्मबल और आत्मत्याग। प्रायः सार्वजनिक जीवनमें स्वार्थ भरा रहता है। लोगोंका यह ख्याल रहता है कि सार्वजनिक जीवन भी एक तरहका बंक है जिससे खासा सूद मिल सकता है। पर महात्माजीका भाव इससे भिन्न है। वह शिष्टतासें अद्वितीय हैं। उनका जीवन आत्मत्यागके लिये ही बना है। अथवा वे मूर्तिमत् आत्मत्याग हैं।"

"उन्हें धन, जन, यश, कीर्ति और आत्मप्रतिष्ठाकी आकांक्षा नहीं। यदि उन्हें भारतवर्षका सम्राट् बना दिया जाय तो वे राजगद्दी कभी भी स्वीकार न करेंगे, बल्कि सारी सम्पत्ति गरीबोंमें बांट देंगे।"

"यदि आप अमरीका राज्यकी सारी सम्पत्ति उनके चरणोंमें अर्पण करना चाहें तो वे उसे स्वीकार न करेंगे, जबतक उन्हें यह विश्वास न हो जाय कि उसे उपयोगी काममें व्यय करनेका उन्हें पूरा अधिकार है।"

"वे सदा मानवसमाजकी हितसाधनाकी चिन्तामें लगे रहते हैं और उसके बदले कुछ चाहते नहीं, सूखा धन्यवाद-तकके भिखारी नहीं। इसे अत्युक्ति न समझियेगा।"

"एक बार वे बोलपुर आकर कई दिन रहे। उनके आत्म-त्यागकी विशिष्टता इस कारण है कि वे सदा निडर रहते हैं।"

"न तो उन्हें राजा महाराजाओंसे भय है, न तोप तलवारोंसे। जेल, यातनायें, निरादर—यहांतक कि मृत्युका भय उनकी आत्मापर जरा भी प्रभाव नहो डाल सकता।"

"वे स्वतन्त्र आत्मा हैं। यदि मुझे कोई तंग करे तो मैं सहा-यताके लिये चिल्लाता फिरूंगा पर यदि गांधीके साथ कोई दुर्व्यवहार करे तो वह बोलेंगेतक नहीं। वे उस समय भी हंसते रहेंगे और यदि प्राणपर आ बने तो हंसते हंसते उसे भी त्याग देंगे।"

"उनकी सादगी बच्चोंकी सी है। उनकी सत्य-निष्ठा अप्रमेय है। मानवसमाजके प्रति उनका अद्भुत प्रेम है। उनकी आत्मा ईसा मसीहके समान है। जितना अधिक मैं उनके बारेमें जानने लगा हूं, उतना ही उनके प्रति हमारी श्रद्धा बढ़ती जा रही है। यह कहना व्यर्थ है कि संसारका कायापलट करनेमें इस मनुष्य-का सबसे बड़ा हाथ रहेगा।"

"ऐसे व्यक्तिका इस संसारमें अधिकाधिक परिचय होना चाहिये। और आप विश्वविदित हैं, फिर आप इस बातकी चेष्टा क्यों नहीं करते?"

"इसके लिये मैं क्या कर सकता हूं। इस महान आत्माके सामने मैं क्या वस्तु हूं। और बड़े आदमीको बड़ा बनानेकी चेष्टा करना अत्युक्ति है। उनकी श्रेष्ठता उनके यशसे है और जिस दिन संसार उनकी महत्ताको स्वीकार करनेके लिये तैयार हो जायगा उस दिन उनकी प्रतिष्ठा आपसे आप जम जायगी। उपयुक्त समय आते ही महात्माजी विश्वविदित हो जायंगे, क्योंकि उनके सत्य, प्रेम और भ्रातृत्वके सिद्धान्तोंकी संसारको आवश्यकता है।"

"गांधीजी पूर्वीय आत्माके नमूना हैं क्योंकि उनसे सबको इस बातकी शिक्षा मिल रही है कि मनुष्य अध्यात्मिक जीव है और सदाचार तथा अध्यात्म जीवनमें ही वह फूल और फल सकता है अन्यथा वस्तुवादके घेरेमें आत्मा और शरीर दोनोंका नाश हो जाता है।"

"कुछ महीने हुए उन्होंने कहा था :—"भारतको एक वर्षके भीतर ही स्वराज्य मिल जायगा। चाहे उस अवधिके भीतर यह काम न हो जाय पर उनकी आत्मा दृढ़ है और उनके हृदयमें विश्वास है। और उनके लिये वह कोई बात उठा न रखेंगे।"

"दक्षिण अफ्रीकामें उन्होंने आठ वर्षतक सत्याग्रह-संग्राम चलाया और अन्तमें विजयी हुए। पशुबल कुछ कालके लिये सत्यपर हावी हो जाय पर अन्तमें "सत्यमेव जयते।"

"असहयोग आन्दोलनके विषयमें आपके क्या मत हैं!"

"यह भीषण आन्दोलन है। यह पशुबलके साथ आत्मबलका युद्ध है। आत्मबलमें मुझे अधिक विश्वास है। सौभाग्यकी बात है कि इस आन्दोलनके विधायक महात्मा गांधीके सदृश महापुरुष हैं, जिनकी सारा भारत उपासना करता है। जबतक असहयोग-नौकाके आप कर्णधार हैं तबतक इसके पथभ्रान्त होने तथा निर्दिष्ट स्थानपर पहुंच जानेमें किसी तरहकी आशंका नहीं।"

(एक अमेरिकन पत्रके प्रतिनिधिसे कविवर श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुरकी बातचीत)

भारतके उद्धारक

भारतमें पहुंचते ही लार्ड रीडिंगने महात्मा गांधीसे मिलनेकी इच्छा प्रगट की, जिस कार्रवाईसे कितने ही सरकारी कर्मचारियोंको रातमें नींदतक नहीं आयी। यद्यपि उन लोगोंके बातचीतके विषयमें किसीको कुछ ज्ञान नहीं, पर गांधीजीका कथन है कि हमलोग एक दूसरेको समझ गये हैं। इसका गांधीके अनुयायियोंपर किसी तरहका बुरा प्रभाव नहीं पड़ा है। उसकी आज्ञाको शिरोधार्यकर लाखों भारतीय विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कारकर, खद्दर धारण करने लगे हैं, उनका इस आज्ञापर कि चरखेमें ही स्वराज्य है और यही कारण है कि राष्ट्रीय झण्डेका निशान चरखा रखा गया है।

योगियोंके अहिंसाव्रतमें अस्त्र उठाना पाप है। घृणाके स्थानमें वे प्रेम करते हैं। गांधीका कहना है—"साधनके होते हुए भी मैं तुमपर हाथ नहीं उठाऊंगा। मैं केवल आत्मत्याग द्वारा तुमपर विजय प्राप्त करना चाहता हूं। सांग्रामिक साधनका यहां अभाव है। पर आत्मबलपर यहां पूरा अधिकार है। और उसीको जागृत करनेमे लगा हूं।"

भारतकी जनता मूकोंकी भांति उसका अनुसरण करती है। केवल दो सन्यासियोंके यह कहनेपर कि तुम लोगोंने अहिंसा व्रत धारण किया है, २०,००० उत्तेजित जनता एकदम शान्त हो गई। गिरफ्तार होनेपर वे अपनी सफाई नहीं देते। वे सत्याग्रही हैं। इस बलके सामने संसारकी सारी शक्तियां बेकार हैं।

विदेशी शक्तियोंसे असहयोगका तात्पर्य परस्पर प्रेम और मेल है। इससे नयी राष्ट्रीयताकी स्थापना हो रही है जो प्राचीन दासतासे ३३ करोड़को मुक्त करनेके लिये चेष्टा कर रही है। वह भारतवर्षको नये विधानका ज्ञान दे रही है। अर्थात् स्वतन्त्र होकर रहना, पंचायती अदालतोंकी स्थापना करना, ग्राम्य संगठन करना, राष्ट्रीय विद्यालयोंकी स्थापना करना, भारतीय वाणिज्य व्यवसायको पुनरुज्जीवित करना सारांश यह कि पददलित और मर्दित जनतामें नये जीवनका संचारकर उनकी दशा सुधारना।

भारतवासियोंका सरकारके साथ असहयोगका अर्थ 'अस्वीकार' लगाया जा सकता है। बुराइयोंके त्यागके माने भलाइयोंका ग्रहण करना है और इसीने भारतमें नवयुग स्थापित कर

श्रिया है। यही असहयोगका विध्यात्मक अंग है और महात्मा-जीके सम्पूर्ण कार्यक्रमकी सफलताका ज्वलन्त प्रमाण है।

असहयोग आन्दोलन एक अजीब तरहका आन्दोलन है। संसारके लिये यह एकदम नया है। संसार चाहे कुछ कहेपरर यदि यह सिद्धान्त पूर्णतया सफल हो गया तो संसारसे पशुबल उठ जायगा और ईसा मसीहकी शिक्षा कि—"यदि कोई तुम्हें दाहिने गालपर मारे तो उसके सामने अपना बायां भी कर दो" पूर्णतः चरितार्थ हो जायगी। अर्थात् संसारकी उस पिशाचसे रक्षा हो जायगी जो अच्छेसे अच्छे आदमियोंको भी अपना शिकार बना लेता है और चार पीढ़ीतक अपना दखल जमाये रहता है।

ब्रिटिश सरकारके मतसे गांधी भारतका शत्रु है और—जैसा कि वह स्वयं कहता है—राजद्रोही है, पर यह उसीका प्रभाव है कि रक्तपात नहीं हो रहा है। भारतवर्ष इस समय एक विचित्र तरहकी क्रान्ति चला रहा है। वह सीजर और ईसा मसीहके सांग्रामिक तरीकोंसे ही युद्ध कर रहा है।

पश्चिमके लोग विस्मयके साथ इस महत्वपूर्ण आन्दोलनकी प्रगति देख रहे हैं। गांधीमें नैसर्गिक नेतृत्व है और इस बातको सभी स्वीकार करते हैं। लाखों भारतवासी केवल आत्मबलके सहारे भारतको स्वतन्त्र करनेके लिये भीषण संग्राम कर रहे हैं। यदि इन लोगोंने इस उपायसे भारतको स्वतन्त्र कर लिया तो संसारका संकट दूर हो जायगा। (ब्लांकी वैट्सन)

वर्तमान समयका सबसे बड़ा आदमी

महात्मा गांधीमें ऐसी कौनसी विचित्र शक्ति है जिसके बलपर उसके विचित्र सिद्धान्तके द्वारा लोग ब्रिटिश सरकारको नीचा दिखाना चाहते हैं और जिसके स्वीकार करनेसे भारत-वासियोंके हृदयमें उत्साहकी लहरें तरंग मारने लगी हैं और यूरोपीय इसकी खिल्ली उड़ाने लगे हैं।

वह भारतकी आत्मा है जो आन्दोलनके लिये तैयार हुई है, भारतीय असन्तोषका रूह है, पूर्व और पश्चिमकी बराबरीके द्योतनका पूर्ण प्रमाण है और विस्मयजनक तथा प्रभावोत्पादक है। इसका शारीरिक गठन कुछ नहीं है। ५॥ फुट लंबा, दुबला पतला, मोटा खद्दर धारण किये, भद्दी सूरतवाला किसी महत्वका व्यक्ति नहीं है पर नेत्रोंकी ज्योति उसे साधारण जनसे बहुत ही ऊंचे उठा देती है। कुल और धनकी मर्यादा उसकी निगाहमें कुछ नहीं। उसके पिता किसी देशी राज्यमें कर्मचारी थे। स्वयं यह बेरिस्टर था पर कुछ दिन हुए इसने वकालत करनी छोड़ दी। इसकी उत्पत्ति भी क्षत्रिय या ब्राह्मण जैसे उच्च कुलमें नहीं है। यह वैश्य सन्तान है। सात वर्षके इङ्गलैण्ड-निवास तथा बीस वर्षके दक्षिण अफ्रीकाके निवाससे उसे बाह्य जगतका असीम ज्ञान और अंग्रेजी भाषामें व्युत्पत्ति हो गई है। वह प्रखर

वक्ता नहीं है पर तोभी उसके व्याख्यान बड़े ही प्रभावोत्पादक होते हैं। पाण्डित्यका भी उसे दावा नहीं और न तो उसने ऐसी कोई पुस्तक ही लिखी है जो उसके नामको अमर कर सकती है। वह किसी दलका नहीं:पर इस समय उसका प्रभाव भारतवर्षमें सबसे अधिक है। उसकी इस अमोघ शक्तिका क्या कारण है? इसका उत्तर केवल इतना ही है कि महात्माजीका व्यक्तित्व ही इस प्रभावका कारण है। वह तपस्वीसे राजनीतिज्ञ बन गया है और वह टालस्टाय तथा रस्किनके सिद्धान्तोंका प्रचार करता फिरता है। इस वर्त्तमान समयमें इसका कोई भी प्रतिद्वन्द्वी नहीं है। सेनापति बूथ अथवा पादरी राथ स्नाइलसे इसकी तुलना की जा सकती है पर वे भी इस दर्जेतक नहीं पहुंचते। वर्णभेदको वह नहीं मानता। उसके बारेमें मैंने निम्नलिखित बातें अपने कानों सुनी है। एक अपढ़ देहातीने कहा था:-"ईश्वरने करोड़ोंमें ऐसा एक आदमी पैदा किया है।" एक स्टेशन मास्टरने मुझसे कहा—"महाशय, ये ईश्वरके अंश है।" एक विद्यार्थीने कहा—"महात्मा सचमुच महात्मा हैं।" इसके बारेमें अनेक तरहके मत हैं। कोई उसे पागल बतलाता है तो कोई स्वप्नदर्शी। कोई कोई कहते हैं कि वह छिपा रुस्तम है। सन्यासीके वेषमें कट्टर राजनीतिज्ञ है। किसीका मत है कि वह अदूरदर्शी क्रान्तिकारी है और कितनोंका मत है कि वह देशबन्धु और भारतका उद्धारक है। इससे इतना तो सिद्ध हुआ कि चाहे उसे क्रान्तिकारी या विकासवादी, अवतार या राजनीतिज्ञ, तपस्वी या पापी, पागल या सुदूरदर्शी,

घातक या उद्धारक, साधारण जीव या असाधारण आत्मा कहिये पर वह सर्वसाधारणसे ऊंचा है और दर्शनीय है। किसी अंग्रेजी समाचारपत्रमे केवल गाली देना या अन्ध उपासना करना उसके प्रति अन्याय करनेके तुल्य है। शासनसंबंधी दुराचार, कानूनी विषमता, व्यवसायिक असुविधायें, घरमे तथा बाहर सामाजिक असमानता, वादाखिलाफी, पंजाबमे मार्शल लासे किये गये अत्याचार: उसकी वर्त्तमान प्रवृतिके कारण हैं और जबतक इनका प्रतिशोध नहीं हो जाता, वह शान्त नही हो सकता।

न तो वह कुटिल राजनीतिज्ञ ही है और न कट्टर धर्मानुरागी। वह हिन्दू बनता है पर यह शब्द बड़ा ही व्यापक है। किसी किसी बातमें तो वह मुसलमानों और ईसाइयोंके मतका समर्थक है। खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायने उसकी सहानुभूति मुसलमानोंकी तरफ खींच ली। वह टालस्टाय और रस्किनका अनुयायी है। पर वह ईसा मसीहका परम भक्त है और उनकी शिक्षाओंका उतना ही आदर करता है जितना गीताका। उसे सन्त पालकी प्रेमोक्तिमे आत्मबलका आभास मिलता है। इसमें सबसे बड़ी बात यह है कि ईसाई धर्मका इसने पूर्णतः अध्ययन किया है। उसमें साहस और प्रेमका विचित्र सम्मिश्रण है। न वह दोस्तसे डरता है न दुश्मनसे। वह निडर होकर अपनी बातें कहता है। यह भी उसकी विशेपता है, क्योंकि भारतीय प्रायः संकोची होते हैं और सच बात भी स्पष्ट तौरसे नहीं प्रकट करते। दूसरा गुण उसमें संकल्पप्रियता है। द्रढ़ता

और जिदमें कोई विशेष अन्तर नहीं। इस लिहाजसे महात्मा गांधीको पूरा शैतान समझना चाहिये। जिस मार्गको उसने पकड़ लिया, फिर सिवा पतनके कोई शक्ति नहीं जो उसे विचलित कर सके। यही बात उसके सत्याग्रह आन्दोलनमें हुई, जिसके कारण हुल्लडशाही हाथसे बाहर हो गई और पंजाबमें वह दुःखद घटना हुई। इतना कट्टर होनेपर भी वह समझौतेकी कदर करता है और कितने ही अवसरोंपर बड़ी चातुरीसे काम लिया है। बहुत कम राजनीतिज्ञ पाये जायंगे जो ५२ वर्षकी उम्रमें इतना चमत्कार दिखाये हों। दक्षिण अफ्रीकामें जो कुछ उसने किया इतिहासके पन्नोंमें स्वर्णाक्षरोंमें लिखा गया, जो कोई भी इस वृत्तान्तको पढ़ेगा उसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रहेगा। वहांसे लौटकर वह इस अवस्थामें भी भारतके प्रश्नोंको मनन करने लगा। लोगोंको बड़ा हर्ष हुआ, क्योंकि लोग उसे स्वर्गीय गोखलेका उत्तराधिकारी समझने लगे। कुछ कालतक तो वह सामाजिक और आर्थिक प्रश्नोंकी विवेचना करता रहा। चम्पारन और खैरागढ़के किसानोंकी दुर्दशाको मिटानेकी उसने बड़ी चेष्टा की। उससे प्रगट हुआ कि किसानोंपर उसका बहुत कम (?) प्रभाव है। उसने ग्राम्य कारीगरी विशेषतः चरखेके प्रचारके लिये बड़ा प्रयत्न किया और हिन्दुस्तानियोंको आत्मगौरवकी शिक्षा दी। स्त्रियोंकी स्वतन्त्रताका वह कट्टर पक्षपाती है और भारतीय प्रणालीपर शिक्षाका वह प्रतिपादक और समर्थक है। अन्तमें देशभक्तिसे प्रेरित होकर

वह राजनीतिमें भी घुस पड़ा और आज वह गरम दलवालोंका प्रधान नेता तथा असहयोग आन्दोलनका विधायक माना जाता है। वह बहिष्कारका आन्दोलन है और उसका ध्येय वर्तमान शासनको लाचार और पंगु बनाकर पूर्ण स्वराज्यकी प्राप्ति कर लेना है। पहले वह केवल रूम (तुर्की) के साथ की हुई सन्धिकी शर्तों में परिवर्तन और पंजाबमें किये गये अत्याचारोंका प्रतिशोध चाहता था, पर आज ये प्रश्न पूर्ण स्वराज्यमें समा गये हैं।

इस असहयोग आन्दोलनका पोषक केवल गांधी ही नहीं है बल्कि निम्नलिखित घटनायें भी हैं—(१) रौलट ऐक्ट—इस धाराके अनुसार भारत सरकार विद्रोह करनेवालोंका द्वार बन्द कर देना चाहती थी, और शिक्षित भारतीयोंके कट्टर विरोध करनेपर भी वह स्वीकृत किया गया। (२) तुर्कोंके साथ सन्धि-जिसमें खिलाफतके प्रश्नपर अन्याय और वादा खिलाफीके कारण भारतीय मुसलमान बिगड़ गये (३) मार्शल लाके दिनोंमें किये गये पंजाबके अत्याचार, जिस अवस्थामें मार्शल लाका प्रयोग किया गया निहायत बेहूदा और लज्जाजनक था। मार्शल लाके विधायकोंका कथन है कि पंजाबमें मार्शल लाने गदर होते होते बचाया। यदि यह सच भी मान लिया जाय तो उसके कारण जो बुराई हुई वह कहीं भीषण है अर्थात् लोगोंके हृदयमें घृणाके भाव उत्पन्न हो गये। (४) दक्षिण अफ्रीका आदि देशोंमें भारतीयोंके साथ अनीतिका व्यवहार राष्ट्रीय जागृतिके साथ २

असह्य हो गया है। (५) युद्धके कारण आर्थिक दुर्व्यवस्था और तज्जनित स्थिति सुधारनेमें भारत सरकारकी उदासीनता। (६) व्यवसायिक कठिनाइयां, जिनका राजनीतिसे घना सम्बन्ध समझा जाता है। (७) वर्तमान अवस्थाके प्रति संसारव्यापी आन्दोलन। इन सब बातोंका अनुमानकर यह मानना विस्मयजनक न होना चाहिये, यदि महात्मा गांधी कहते हैं कि—"ब्रिटिश शासन तौलमें कम ठहरा"। उनका कहना है कि अपने शासनमें भारतकी यह दुरवस्था नहीं हो सकती। यदि यह कहा जाय कि यह कहना भूल है तो मुख्य बातपर इसका कोई असर नहीं पड़ता। वे लोग भारतको पूर्ण स्वाधीन बनाना चाहते हैं और इसके लिये अति शीघ्रता चाहते हैं। आज-तक शिक्षित समाजका लक्ष्य "ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत भारत-की स्वाधीनता" रहा है पर आज गरम दलवालोंका लक्ष्य "किसी भी शांतिमय और संगत उपायों द्वारा भारतके लिये स्वतंत्रता प्राप्त करना है।" "ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत" शब्दको उन्होंने निकाल दिया है और उसके कारण जो विपत्ति आवे उसे सहनेके लिये वे तैयार हैं। इस बातकी भी आशंका है कि भारत द्वितीय आयर्लैण्ड न हो जाय।

मेरे मतसे असहयोग आंदोलन असफल हो जायगा। इसके दो कारण हैं—पहले तो यह मनुष्यकी साधारण प्रकृतिके विप-रीत चलता है। वकीलोंसे वकालत छोड़वाना, व्यवसायियोंसे विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करवाना, कौंसिलोंका त्याग करवाना,

उपाधियोंको छुड़वाना, सरकारी विद्यालयोंसे सम्बन्ध तोड़वाना, सरकारसे हर तरहका सहयोग त्यागना आदि बातें उत्तम होते हुए भी वर्तमान अवस्थामें कठिन हैं। दूसरे इसकी नितान्त आवश्यकतापर अभी पूरा जोर नहीं दिया गया है। किसानोंका पूरा ख्याल नहीं किया गया है। उन्हें यह भलीभांति नहीं दर्शाया गया है कि स्वराज्यका अंतिम परिणाम बड़ा ही सुखद है।

पर असहयोग आंदोलन सफल हो या असफल गांधीकी विजय तो हो चुकी क्योंकि वह एक जातिकी आत्मा हो रहा है। और वहांकी सरकारकी मर्यादासे उसकी कहीं अधिक मर्यादा हो रही है। इतना स्मरण रखना चाहिये कि उसके इस संग्राममें अहिंसा और घृणाका स्थान नहीं है। वह ब्रिटिशके साथ प्रेम रखता है। जाति विद्वेषसे वह परे है। बोअर युद्ध और जर्मनयुद्धमें वह हम लोगोंका सच्चा मित्र और सहायक रहा है। लार्ड रावर्ट उसके दिली दोस्त थे। लार्ड रेडिंग भी इसे मानते हैं। जिस दिन संयुक्त भारतीय राष्ट्रकी स्थापना हो जायगी, महात्मा गांधी और ब्रिटिश राजनीतिकी पूर्ण विजय हो जायगी।

(ग्लासगो हेरल्ड)

ऋषि-मुनि और राजनीतिज्ञ।

महात्मा गांधीको कौन नहीं जानता। ब्रिटिश भारतके कर्मचारी और विदेशी व्यापारी तो उसके नामसे कांपते हैं। उनका मत है कि ब्रिटिश सत्ताको जितना उससे भय है उतना घोरसे घोर विप्लवकारीसे न होगा।

अक्टूबरके एसियाटिक रिव्यूमें बम्बईके प्रधान वकील और नर्मदलके नेता श्रीयुत एन० एम० समरथ लिखते हैं—

"भारतकी राजनीतिमें गरमदलसे जो अभिप्राय है वह महात्माजीपर लागू नहीं है। जिन भारतीय नेताओंमें क्रोधकी मात्रा अधिक है वही गरमदलके माने जाते हैं अर्थात् जिनमें शान्ति पूर्वक विचार करनेकी शक्ति नहीं है।"

"यदि "शान्तिचित्तता" का विशेषण निकाल दिया जाय तो महात्माजीका अस्तित्व निरर्थक हो जाता है। वे कट्टर आदर्शवादी और आत्मबलके प्रवर्तक हैं। आत्मबलपर उनका इतना प्रबल विश्वास है कि वे कहते हैं कि इसके सामने बलिष्ठसे बलिष्ठ शक्तिको अपना सिर झुकाना पड़ेगा।"

"उनकी शक्ति विश्वास और नेकनीयतीमें है। जिस बातकी वे शिक्षा देते हैं उसका पूर्णतः पालन करते हैं और उसके लिये तरह तरहके कष्ट सहन करनेके लिये तैयार रहते हैं।

इस पत्रमें भारत विषयक जितने लेख प्रकाशित होते हैं प्रायः सभीमें गांधीजीके बारेमें भारत सरकारका कुछ न कुछ मत अवश्य रहता है पर उनके विरुद्ध एक भी ऐसा शब्द नहीं रहता जिससे प्रगट हो कि महात्माजी आत्मश्लाघा और आत्मोन्नतिके लिये यह सब करते हो। वे किसी तरहसे परिवर्तित नहीं हो सकते।

महात्मा गांधी एक साथ ही राजनीतिज्ञ और कृपक हैं और उनकी निर्भयता तथा आदर्शवादिताके कारण देशवासी उन्हें देवताकी भांति पूजते हैं। उनसे अनेक डरते हैं पर घृणा कोई नहीं करता। उनके असहयोग आन्दोलनको कलकत्तेकी कांग्रेसने स्वीकारकर देशने इतिहासमें अद्वितीय और अभूतपूर्व कामकी तैयारी की है।

वह अदालतोंके बहिष्कार और विदेशी वस्त्रोंके त्यागका आदेश देते हैं। लड़कों और लड़कियोंको सरकारी पाठशालाओं-से हटा लेना चाहते हैं और उन्होंने कौंसिलोंका त्याग कर दिया है जिसका अभी सुधार किया गया है।

इससे इङ्गलैण्ड घबरा गया है। महात्माजी अपने अनुयायि-योंको पाशविक बलके प्रयोगसे सदा रोकते रहते हैं। वे उन्हें धैर्य धारणका ही आदेश देते हैं और उनको दबाना अत्यन्त कठिन हो रहा है।

'लण्डन टाइम्सके' बम्बईके सम्वाददाताका मत है कि "कांग्रेस-ने महात्माजीके सिद्धान्तको केवल इस कारण स्वीकार किया कि पंजाबकी दुर्घटनासे सबके दिलोंमें घृणाके भाव उत्पन्न हो

गये थे।" पर श्रीयुत स्मरथका मत है कि रौलट ऐक्टने महात्माजीका रास्ता साफ कर दिया। भारतीय जनताकी अवहेलनाकर इस कानूनको पास करनेमें भारत सरकारने भारी भूल की।

उसीके बाद खिलाफतका मसला भी आ गिरा। तुर्कोंके साथ जो व्यवहार किया गया उससे भारतके मुसलमान बड़े ही असन्तुष्ट हुए, यद्यपि बादको प्रगट हुआ कि सन्धिके मामलेमें ब्रिटिश सरकारने पूर्ण नम्रता दिखलाई।*

भारत सरकारने इस बातको दर्शानेकी लाख चेष्टा की कि भारतीय मुसलमानोंके साथ उसकी पूर्ण सहानुभूति है पर सर्वसाधारणका यही मत है कि मुस्लिम धर्म, रूमी सुलतानके अधिकार तथा खिलाफतके प्रश्नमें ब्रिटिश सरकार बराबर हस्तक्षेप करती रही है।

वे पुरानी प्रथाका पुनरुद्धार करना चाहते हैं। उनका मत है कि प्राचीन प्रथाके त्यागसे ही भारतकी यह अवनति हुई है।

उनका मत है कि प्राचीनताकी स्थापनासे ही सब कुछ हो सकता है। यही उनकी अपील है। धार्मिक और सामाजिक सुधारके लिये वर्तमान भारत उसी तरह उत्सुक है जिस तरह मध्ययुगमे यूरोप था।

"धर्म ही उनका प्राण है। वह आज भी धर्मको राजनीतिसे अलग करनेके लिये तैयार नहीं है।"

एक कारण और है जिसकी वजहसे नव भारतको महात्माजीके मन्तव्योंपर सहसा विश्वास नहीं होता। भले या बुरेके लिये भारत पाश्चात्य प्रथाका दास हो गया है, अर्थात् ऐहिक सुख यहां भी प्रधान हो रहा है। पर महात्मा गांधी सबको पलट देना चाहते हैं। वे कहते हैं—"वकीलों, डाक्टरों, रेल,कल, तार आदिको त्याग दो। ईश्वरके सामने ये सब घृणित हैं।"

ब्रिटिश सरकारके सम्मुख विविध समस्यायें हैं, और अनेक तरहके शत्रुका शमन करना है। आयरिश प्रजातन्त्रके संचालक श्रीयुत डि वेलरा असाधारण शत्रु हैं पर उनकी कार्यप्रणाली नवीन या असाधारण नहीं है। बीस वर्ष पहले जेनरल स्मट्स और बोथा भी ब्रिटिश सरकारके कट्टर शत्रु थे पर उनका संग्राम भी उसी प्रचलित प्रणालीके आधारपर था। लेनिन और ट्रस्कीने नये विधान चलाये पर उनमें भी नवीनता न रह गई। किन्तु महात्माजी सबसे भिन्न निकले। वे तो आद्यन्त परिवर्तनशील

है। भारतीय उत्थानके लिये वे अपने तरीकेसे संग्राम चला रहे हैं। उनका सिद्धान्त डिवेलरा और लेनिनके एकदम विपरीत है। ब्रिटिश लोग इस बातको स्पष्टतया स्वीकार कर रहे हैं कि वे चक्करमें आ गये हैं।

(न्यूयार्क ट्रिब्यूनके लण्डनके प्रतिनिधि, आर्थर एस डेप)

महात्मा गांधी

———:०:———

महात्मा गांधी कांग्रेसके प्राण थे। जिस व्यक्तिमें उसके शत्रु भी किसी प्रकारका दोष न पा सकें उसके बारेमें क्या कहा जा सकता है। उनकी नेकनीयती, आत्मबल तथा सदाचारकी उनके शत्रु भी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करते हैं। सर वलण्टाइन शिरोल—जिन्होंने कहा था कि महात्मा गांधीमे स्थिरता नहीं है—का भी मत है कि महात्माजीमें प्रबल आध्यात्मिक बल है। कितनोंका मत है कि महात्माजी पागल हैं पर जो उन्हें पहचानते हैं, वे उनकी महत्ताको स्वीकार करते हैं। संसारकी इस विप्रकृत अवस्थामे सचाई और अच्छाईको लोग पागलपन ही समझते हैं, जहां बेईमानी और बदनीयतीका राज्य है वहां ईमान्दारीकी प्रतिष्ठा कहां ? जहां बुराईका साम्राज्य है वहां सच्चे मनुष्य और सच्चे आन्दोलनकी क्या कदर ! पर जिनके भाग्यमे उनके साथ बातचीत करना लिखा है, जिन्हें उनके सहवासका अवसर मिल चुका है, उनका यही मत है कि ईश्वरने जो शक्ति उन्हें दी है, बहुत कमको प्राप्त है। इसे आप पागलपन भले ही कहें पर उस क्षीण कायमें जो शक्ति है उसने सभी राजनीतिक चालोंको मात कर दिया। इतने अधिक अनुयायी आजतक किसीके न हुए। केवल अपढ़ ही इसके अनुयायी नहीं हैं, शिक्षित समाज भी "महात्मा" शब्दसे

उसका आदर करता है और सरकारी कर्मचारी भी उसकी प्रखरताको स्वीकार करते हैं। पश्चिममें लेनिनका अवतार हुआ, जिसकी प्रवल शक्ति अधिकार और सिद्धान्तप्रखरताका कोई सानी नहीं, पूर्वमें महात्मा गांधीका जन्म हुआ जो हर बातमें लेनिनसे भी चढ़ गये हैं। दोनोंमें कितना विषम अन्तर है। लेनिन पशुबलके सहारे चलता है, महात्माजी आत्मबल और सत्याग्रहके पक्षपाती हैं। लेनिन तलवारपर भरोसा करता है, महात्माजी आत्मबलपर। ये दोनों महापुरुष उन दो विरोधी शक्तियोंके प्रवर्त्तक हैं जो अपनी स्थिति और आस्थाके लिये संग्राम कर रही हैं।

(वेनरपूर १९२१)

महात्मा गांधी

—:o:—

उस शक्ति और साहसका वह मनुष्य है जिसके नामसे विस्मय, प्रेम और भय तीनोंका एक साथ संचार होता है जो पाश्चात्य सभ्यताको आसुरी बतलाकर उसका तिरस्कार करता है और आधुनिक विकाससे घृणा करता है। कारखाने, रेल, तार, अस्पताल आदिको व्यर्थ और आसुरी बतलाता है।

मोहनदास करमचन्द गांधीकी अवस्था इस समय ५१ वर्षकी है। बाल सफेद हो चले हैं, आखें ज्योतिपूर्ण हैं और बदन पतली है। उसकी आवाज़ धीमी और एक तरहकी, पर सुननेमे मीठी।

गांधीकी महत्ता केवल इस बातमे है कि वह मृत बातोंमे भी जान डाल देता है। तपस्वी होकर भी वह तर्कमें अद्वितीय है। दक्षिण अफ्रीकामें उसने स्मट्सको भी मात कर दिया। विना किसी द्वेष भावके वे दोनों वर्षोंतक भारतके प्रश्नपर विचार और विवाद करते रहे।

उसके सिद्धान्तका मूल तत्त्व उसके निम्नलिखित शब्दोंमें भरा है—"आजतक मुझे जितने धार्मिक जीव मिले सब छिपे राजनीतिज्ञ थे। मैं प्रत्यक्ष राजनीतिज्ञ होकर भी हृदयसे धार्मिक जीव हूं।

(डेलीमेल डी० पी०)

———

सत्याग्रह-संग्राम।

'नेशन' और 'एथीनियम' पत्र लिखते हैं:—महात्मा गांधीका व्यक्तित्व इतना प्रबल है कि भारतके सुदूर देहातमें रहनेवाले भी उनकी अवहेलना नहीं कर सकते। भारतमें उसका उसी तरह मान है जिस तरह रूसमें टालस्टायका था। वह अपने जातिके आध्यात्मिक जीवनको उत्कृष्ट बनानेकी सदा चेष्टा करता है। पाश्चात्य लोगोंको उसकी रीतियां दुरूह प्रतीत होती हैं और भारतीय शासन-विधानके सामने कठिनाई आ पड़ती है पर यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो उसमें किसी तरहकी चाल नहीं है। पाश्चात्य राजनीतिज्ञ:राजनीतिक चालोंका प्रयोग प्रतिदिनकी प्रचलित घटनाओंके आधारपर ही करते हैं। भारतीय असह-योग आन्दोलन और आयर्लैंण्डके सिनफिनरोंमें कुछ समानता अवश्य है पर आयर्लैंण्डवाले भी पाश्चात्य हैं इसलिये उनकी प्रणाली भी आत्मबलपर निर्भर नहीं करती।

देखनेमें तो महात्मा गांधीके स्वराज्य प्राप्त करनेके साधनों और सिनफिनरोंके साधनोंमें किसी प्रकारका अन्तर नहीं प्रतीत होता। सिद्धान्ततः अङ्गरेज़ों(?)और सरकारी दफ्तरोंका बायकाट किया जाता है, अर्थात् कौन्सिलोंमें जानेसे मना किया जाता है। आसामके चाय-बगीचेसे कुली बुला लिये जाते हैं और काम कर-

नेसे उन्हें रोका जाता है (?) इङ्गलैण्डके विशेषतः लंकाशायरके बने वस्त्रका बहिष्कार किया जाता है, पाश्चात्य ढङ्गसे चलाये गये और सरकारी कालेजों तथा स्कूलोंसे लड़के हटा लिये जाते हैं, देशी मिलोंकी संख्या पर्य्याप्त न होनेसे छोटे बड़े सबको चरखा और करघा चलानेका आदेश दिया जाता है और इसीके सहारे भारतको स्वराज्य दिलानेका वचन दिया जाता है। महात्मा गांधीकी भविष्यवाणी आशापूर्ण होती है। उसने स्पष्ट शब्दोंमें कहा था कि अक्टूबरके अन्ततक पूर्ण स्वराज्य मिल सकता है और यदि वर्त्तमान सालके अन्ततक स्वराज्य प्राप्त न हो जाय तो इस असहयोग आन्दोलनको मरा समझ लीजिये। मेरी भावना है कि साम्राज्य-शक्ति उसके अनुमानसे कहीं अधिक प्रबल है। पर कुटिल राजनीतिके हिसाबसे उसका अनुमान भी उचित है। साम्राज्य-शक्तिकी जड़ अर्थ है। यदि भारतके बाजार हम लोगोंके हाथसे सदाके लिये निकल जायँ तो हमे बाध्य होकर इस प्रश्नपर विचार करना पड़ेगा कि भारतको औपनिवेशिक स्वराज्य दे दिया जाय या नहीं। मेरी सम्मति तो यही है कि यदि कोई देश पूर्ण सत्ता प्राप्त करनेके योग्य हो गया हो तो धीरे धीरेकी नीतिका सर्वथा त्यागकर पूर्ण अधिकार उसे तुरत दे देना चाहिये।

भारतके वर्त्तमान आन्दोलनमें चिन्ताजनक बात है। रवीन्द्र-नाथ ठाकुरने जो अभी विदेश यात्रासे लौटे हैं—लोगोंका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है। उन्होंने कहा है मुझे इस बातका घोर दुःख

है कि मेरा इस आन्दोलनसे मतभेद है। ठाकुर साहब कट्टर देशभक्त हैं। पंजाबके हत्याकाण्डसे पीड़ित होकर उन्होंने अपनी आत्माकी प्रेरणाके अनुसार 'सर' की उपाधि त्याग दी थी। पर महात्मा-जीके सत्याग्रह आन्दोलनसे वे भी सहमत नहीं हैं। प्रत्येक वस्तु यहांतक कि पाश्चात्य विज्ञानके वरकतोंको त्याग देनेका अभिमान केवल पूर्वीय प्रथाके अनुसार है। पर यह निषेधात्मक और अक्रि-यात्मक है, वह पूर्वीय बौद्धमतके अनुसार है। पूर्वके लोग त्याग जीवनसेही महत्‌की पदवी प्राप्त करते हैं। प्रत्येक सुख साधनका त्याग कर देते हैं। उनके मतसे महत् केवल गुणात्मक है। उच्च आत्मायें इस प्रकारसे उद्‌बोधनको प्राप्त हो सकती हैं पर सर्व-साधारणमें इसका प्रयोग द्वेष, घृणा और अकर्म्मण्यतामें प्रवृत्त होता है। पर पाश्चात्य लोग किसी निर्दिष्ट वस्तुमें ही महत्ताकी प्राप्तिकी चेष्टा करते हैं। हम जब उसकी कमजोरियोंको जानते हैं। निर्दिष्टको लक्ष्य बनानेसे सिद्धान्त नहीं चलता। यह केवल ऐहिक है। ठाकुर रवीन्द्रनाथसदृश लोगोंका आदर्श दोनोंका प्रति-शोध है। पूर्वीय प्रथामें भी निर्दिष्ट वस्तुमें ही महत्‌की प्राप्तिकी कामना होनी चाहिये पर पाश्चात्यकी भांति उसे इस प्रकार न निरत हो जाना चाहिये जिससे पूर्णताका ध्यान छूट जाय और अंशताकेही चक्करमें पड़ा रहे।

इस निरूपणको किसी उदाहरण विशेषमें प्रयुक्त कर देखना चाहिये। सिनफिनरोंका उदाहरण ले लीजिये। इङ्गलैण्डके वैभवशाली धनिकोंसे आयर्लैण्डके उत्पादन तथा वियोजनकी

रक्षाका वे अपना निजी तरीका वर्तते हैं। उन लोगोंने किसानोंका समवाय संघ स्थापित किया। इससे प्रारम्भिक अवस्थासे उन्हें आगे बढ़ना पड़ा। उन्होंने विदेशियोंको नष्ट करना भी आरम्भ किया। इसी प्रकार जब भारतके लोग लंकाशायरके यन्त्रोंके मुकाबिले चरखा और करघा चलाते है तो उनकी चेष्टा छोटेसे बड़ेको मात करनेकी होती है। इस बातका सदा स्मरण रखना चाहिये कि मशीनकी उत्पादकतामें श्रमकी बड़ी बचत है।

इस प्रकारका प्रयास कितना हास्यजनक है जबकि उन छात्रोंको पढ़ना लिखना छुड़ाकर चरखा और करघा चलानेमें लगा दिया जाता है जहां दिन भर हाथ पैर मारकर वे उतना काम कर सकते हैं जितना कि एक यन्त्र एक घंटेमें कर सकता है। क्या सचमुच भारत वैज्ञानिक आविष्कारोंकी अवज्ञा करना चाहता है? मेरी समझमें तो भारतका उद्धार पाश्चात्य कला-कौशलका ज्ञान प्राप्त करनेसे ही हो सकता है। यदि कोई वास्तवमें भारतका उद्धार चाहनेवाला देशभक्त है ता उसका धर्म है कि छात्रोंको इस प्रकार अकर्त्तव्य कर्ममें व्यस्त न कर उन्हें कला कौशलमें ही सिद्धहस्त होनेकी सलाह दे।

इस तरहकी सलाहसे अंग्रेजोंकी ऐहिक सम्पन्नतासे कोई सम्बन्ध नहीं। महात्माजीका चरखे और करघेका कार्यक्रम आर्थिक और क्रियात्मक है पर वह साधक नहीं हो सकता। यदि महात्मा गांधी आयरिश मिस्टर रूसलकी भाँति अनुत्पादक कृषिके लिये कोई उपयुक्त साधन निकालते तो उनकी सफलता अवश्यम्भावी

थी। यह काम धीरे२ होगा पर भूमिकी उत्पादकताकी वृद्धिके साथ ही साथ कृषकोंका नैतिक विकास भी उन्नत होता जायगा। और यदि स्थानीय लुटेरों (फाटकेबाजों) को वह इस क्षेत्रसे दूर रख सके तो आर्थिक विकासके साथ ही साथ सदाचार भी सुधरता जायगा। हमलोग पूर्वको भी अर्थलोलुपताके भंवरमें नहीं डालना चाहते पर साथ ही साथ पाश्चात्य वैज्ञानिक उपयोगितासे भी उसे सर्वथा वञ्चित नहीं रखना चाहते। विना इसके उपयोगके भारत और चीनकी अधिक जनसंख्याका प्रश्न भी नहीं हल हो सकता। इस व्यवस्थाके अनुसार सर जगदीश बोसने अपने आविष्कारों द्वारा महत्का जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह सैकड़ों प्रकारके त्याग और फकीरीसे नहीं हो सका है।

पर भारतीयोंको अनेक तरहकी शिक्षा और सान्त्वना देना तथा अपने कसूरको न स्वीकार करना उचित नहीं। यदि आज भारतके लोग पागलपनकी बातें कर रहे हैं, जो ब्रिटिश सत्ताके ही प्रतिघातक नहीं बल्कि अकर्मण्य हैं तो इसकी उत्तेजना हमीने दी है। ओडायर और डायरके अत्याचारोंने ही उनकी मानसिक स्थितिको डावांडोल कर दी। हमारेही सैनिकों और अफसरोंने उन्हें बतलाया कि हमारा जुआ मानमर्यादाका घातक है। लाचार हो उन्हें उन उपायोंका अवलम्बन करना पड़ा जिनके द्वारा वह अति शीघ्र दूर किया जा सकता था या किये जानेकी संभावना थी। और टर्कीके प्रति हमारी नीतिने जो उत्तेजना फैलायी उसे भी न भूलना चाहिये। भारतीयोंकी

उत्तेजनाका प्रधान कारण यह है कि हमलोगोंने ईसाई धर्माव-लम्बियोंके साम्राज्यवादकी सहायता उस शक्तिके प्रतिकूल की है जिसका धर्म पूर्वीय है। हमारा व्यक्तिगत मत है कि पूर्वीय ईसाईयोका सदाचार मुसलमानोंकी अपेक्षा किसी प्रकार उन्नत नहीं है। उनके आचरणपर धर्मका कुछ भी प्रभाव नहीं हैं। जब कभी उन्हें कत्ले आमका अवसर मिला है उन्होंने निःसंकोच उसका प्रयोग किया है। पूर्वीय ईसाईयोंके प्रति हमारा पक्षपात स्वाभाविक है पर इसके कारण सारा पूर्व हमारा विरोधी हो सकता है। यदि यह कहा जाय कि दुर्बल शक्तियोंकी रक्षा करना हमारा परम कर्त्तव्य है तो हमारी सरकारने घृणित प्रकारसे आर्मेनियावालोंकी अवज्ञा की। पर धार्मिक विजयकी आकां-क्षाका कुपरिणाम प्रत्यक्ष हो रहा है। जबतक हमलोग तुर्क और ग्रीसके बीच न्यायके अनुसार सन्धिकी आयोजना न करेंगे, भारतकी जनतामें शान्तिका समावेश नहीं हो सकता।

(असहयोग पर अंग्रेजी पत्रोंकी एक दृष्टि)

आत्मा और शरीरका युद्ध।

आत्मा और शरीरके युद्धका एक उदाहरण भारतका वर्तमान आन्दोलन है। इङ्गलैण्डवालोंको इस आन्दोलनका जो ज्ञान है उसके आधारपर यह निर्णय करना कि कौन सही और कौन गलतीपर है असंगत है।

लगभग १८८९ ई० में मोहनदास कर्मचन्द गांधी नामका एक भारतीय छात्र कानून पढ़नेके लिये इङ्गलैण्ड आया। यह शिक्षित कुटुम्बका सत्पात्र धनी और बुद्धिमान था। उसका रहन सहन सर्वसाधारणकी भाँति था, उसमें ऐसी कोई विशेषता न थी जिससे मालूम होता कि जैनियोंका सिद्धान्त ग्रहणकर उसने विषय वासना और मांस मदिरासे मुंह मोड़ लिया है।

वह बैरिस्टरी पासकर बम्बईमें पूर्ण योग्यताके साथ बैरिस्टरी करने लगा था। उसकी धार्मिक ममता कानूनसे अधिक थी। धीरे २ उसकी तपस्या बढ़ती गयी। उसने अपना सर्वस्व सदुपयोगमें लगा दिया और दरिद्रताका जीवन स्वीकार किया। उसने बैरिस्टरी करनी भी छोड़ दी क्योंकि उसके धर्मके अनुसार उस व्यवस्थाका सहायक बनना पाप है जिसमें जबरदस्ती न्याय किया जाय। १९१४में पहले पहल मुझसे इङ्गलैण्डमें उससे मुलाकात हुई। उस समय वह केवल चावल खाता था

और जमीनपर सोता था। उसकी पत्नी भी उसका पूरा अनुकरण करती थी। बातचीत करनेमें उसकी साधना टपकती थी। उसकी देशभक्ति धर्ममिश्रित है और वह भारतका चारित्रिक सुधार भारतीय सदाचारके अनुसार करना चाहता है जिसमें परस्पर कोई रुकावट न हो और यथासम्भव पाश्चात्य व्यवसायिक दासता, भौतिक सभ्यता, अर्थलोलुपता और युद्धसे इस देशको बचाना चाहता है।

नोट—मैं केवल उसका मत प्रगट कर रहा हूं। न मैं अपनी ओरसे कुछ कह रहा हूं और न मैं इसे सही बतला रहा हूं।

पूर्वीय सदाचारमें तपस्वी जीवनका बड़ा आदर है। अपढ़ लोगोंकी भांति उन्हें केवल इस बातका पूरा विश्वास हो जाना चाहिये कि उनका नेता सच्चा तपस्वी है। और त्याग ही उसका सच्चा प्रमाण है। गरीबीका जीवन बिताकर तुम जो चाहो उनसे करवा लो। पर यदि उनके सामने ठाठबाटसे जाओ तो वे तुम्हारी बातें नहीं सुननेके। यह कोई पक्का सबूत नहीं है पर अधिकांश सच है, मुझे विदित हुआ है कि इस समय महात्मा गांधीका प्रभाव स्वर्गीय गोखलेसे भी अधिक है।

दक्षिण अफ्रीकाके नेटाल प्रान्तमे कोई १५०,००० भारतीय थे। जातिभेदका प्रश्न इतना तीव्र हो चला था कि अफ्रीकन सरकारने भारतीयोंका आना एक दम बन्द कर देना चाहा और यदि हो सके तो भारतीयोंको अफ्रीकासे निकाल देनेका भी प्रबन्ध करने लगी। पर यह कैसे संभव था। यह सन्धि शर्तके

खिलाफ था। नेटालने इसका विरोध किया क्योंकि वहांके व्यवसायका सारा दारमदार भारतीय कुलियोंके बदौलत था। भारत सरकार तथा विलायत सरकारने भी इसका विरोध किया। यहींसे संग्राम आरम्भ हुआ। दक्षिण अफ्रीकाकी सफेद जातियोंने यदि समग्र भारतीयोंका नहीं तो कुलीवर्गके ऊपरके भारतीयोंका जीवन अशान्त बनाना आरम्भ किया। उनपर विशेष प्रकारके कर लगाये गये, अपमान जनक नियम बनाये गये, हबशियोंमें उनकी गणना होने लगी और गुनहगारोंकी भांति उन्हें अंगूठेका निशान देना पड़ता था। यदि कहींपर सरकारकी उदारतासे स्थिति नरम भी रहती थी तो देशवाली जातिभक्त सफेद जातियां उसकी कठोरता चरम सीमातक पहुंचा देती थीं। संग्रामके आरम्भमें ही भारतीयोंने महात्माजीसे सहायताके लिये प्रार्थना की। १८६३मे वे बैरिस्टरी करनेके लिये वहां गये, उन्हें आज्ञा न मिली। उन्होंने अपना अधिकार साबित किया। राष्ट्रीय नियमके अनुसार एशियाटिक वहिष्कार कानून उनपर लागू न हो सका। वे भारत लौट आये और १८६५ मे पुनः गये। डर्बनमें उनपर हुल्लडशाहीने आक्रमण किया और उनकी जान जाते जाते बची। वहांकी जनताके ये किस प्रकार नेता बने, डर्बनके बाहर उन्होंने किस तरह खेती की और उसमे रहनेवालोंको दरिद्रताका जीवन बितानेकी उन्होंनेकिस प्रकार शिक्षा दी, इत्यादि बातोंकी चर्चाके लिये यह उपयुक्त स्थान नहीं है। कई वर्षतक वे अफ्रीका सरकारके साथ सत्याग्रह संग्राम करते रहे और भारतीयोंका चरित्र तथा

चार उच्च करनेका यत्न करते रहे। पर उन्होंने इस संग्राममें विचित्र व्यवस्था रखी थी। दूसरे सत्याग्रही सरकारकी कठिनाइयोंसे लाभ उठाकर सदा अपना इष्ट साधनेकी चेष्टा और प्रयत्न करते हैं पर गांधीने जब कभी सरकारको कठिनाईमें देखा अपना युद्ध स्थगित कर दिया और उसकी सहायताके लिये तैयार हो गये। १८९९में बोअर युद्ध आरम्भ हुआ, गांधीने तुरत भारतीय सेवा-संघ स्थापित किया। उनका पहले जोरोंमें वहिष्कार किया गया और उन्हें राजद्रोही बताया गया पर अन्तमें उनकी आवश्यकता पड़ी। उनकी सेवायें स्वीकार की गयीं और सरकारी कागजातोंमें उनकी प्रशंसा की गयी। १९०४ में जोहान्सवर्गमें भीषण प्लेग आरम्भ हुआ। सरकारी प्रबन्धके पहलेसे ही गांधीने अस्पताल खोल सेवा शुश्रूषा आरम्भ कर दी। १९०६में बलवा हो गया। गांधीने जख्मियोंको ढोनेका काम किया। इसमें जान जोखिम था। इस सेवाके लिये नेटाल सरकारने इनके प्रति कृतज्ञता प्रकाश की और थोड़े ही दिनोंबाद इन्हें जेलमें ठूंस दिया।

१९१३ में जबकि वह लगातार ,साधारण कैदियोंकी भांति जेलमें भेजे जा रहे थे, उनके २५०० साथी जेलकी कठिन यातना भोग रहे थे, नेटाल और ट्रान्सवालमें भारतीयोंने हड़ताल कर दी, वहां जोरोंकी रेलवे हड़ताल हो गयी जिसके कारण दक्षिण अफ्रीकामें संगठित समाजकी स्थिति भयावह हो गयी। यह समय गांधीके लिये बड़ा ही उपयुक्त था केवल उन्हें कड़ी चोट करनी थी। पर उन्होंने अपने साथियोंको

सरकारी सहायता करनेका आदेश दिया। उन्हें किस तरहकी यातनायें सहनी पड़ीं, कौन कौनसे कष्ट सहने पड़े, कितनी बार जेल जाना पड़ा, कितनी बार उसकी जानपर आ पड़ी, कितनी बार उन्हें अपमान सहने पड़े यह सब नहीं कहा जा सकता। १९१३ से इस प्रश्नको लार्ड हार्डिंज और भारत सरकारने उठा लिया, सम्राट्की ओरसे जांच कमीशन बैठाया गया इसने गांधीके पक्षमें सिफारिश की और भारतीयोंकी रक्षाके लिये इण्डियन रिलीफ ऐक्ट बना।

मैंने सब घटनाओंका संक्षेपमें वर्णन किया है अहिंसात्मक सिद्धान्तने शान्तिमय उपायोंने, सहनशीलताने, जो विजय प्राप्त की उसका वर्णन अत्यन्त रोचक और आश्चर्यजनक है। पशु-बलके साथ आत्मबलका संग्राम और उसमें शनैः शनैः पशुबल-की हार, आत्माकी विजय, कितनी उच्च और महत्त्वकी है।

जिस मनुष्यके लिये विषयवासना, वैभव सम्पत्ति, सुख आराम, प्रशंसा, आत्मश्लाघा, कोई वस्तु नही है, जो आत्म-विश्वासपर ही काम करनेपर उतारू है उसके साथ व्यवहार करनेमें सरकारको समझदारीसे काम लेना चाहिये। वह भीषण और भयानक शत्रु है, क्योंकि उसके शरीरपर अधिकार हो सकता है पर उसकी आत्मापर कब्जा नहीं हो सकता।

अध्यापक गिलवर्ट मरे।
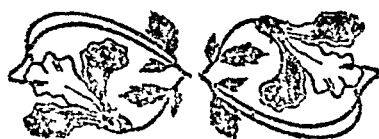
गरीबोंकी आह

मैं अभी चाँदपुरकी दुर्घटनासे लौटा हूं। आसामसे लौटे हुए कुलियोंके बालबच्चों और स्त्रियोंकी हैजेके कारण घोर दुर्दशा हो रही थी, यदि इस लेखमें उस मर्मभेदी घटनाकी लेशमात्र भी आभा है और पीडितहृदयकी यातनाओंका स्पष्टीकरण है तो सहृदय लोग इसे पढ़कर मुझे माफ करेंगे क्योंकि मेरा दिल दर्दसे भरा है और मैं इस लेखको लिखते समय उन बातोंको भूल नहीं सकता, जो कुछ मेरे हृदयमें अङ्कित हैं, उसे कहनेके लिये मैं लाचार हूं। उस दुर्घटनाके बाद ही मैं यह लेख लिखने बैठा हूं। वह करुणाजनक दृश्य मेरी आंखोंके सामने नाच रहा है। मैं उसका उल्लेख किये विना नहीं रह सकता और यह करुणाजनक दृश्य जल्दी भूल भी नहीं सकता। जिस समय मैं इसका उल्लेख कर रहा हूं प्रकृति शान्त है, शान्ति निकेतनका वायुमण्डल अपनी छटा दिखला रहा है, पानी बरस रहा है और जड़ चैतन्य सबमें नव जीवनका संचार हुआ है पर मेरी आत्मा क्षुब्ध है, हृदय जल रहा है और उसीको मैं अङ्कित कर रहा हूं। यह सबको विदित है कि आसाम चाह-बगीचेके कुली किस दैन्य दशामें आये, न उनके तनपर वस्त्र था और न उनके पास भोजनकी सामग्री, दाना विना उनकी आंखें खोडरा गई थीं, उनके लड़के अन्न विना मर रहे थे और उनमें खड़े होनेकी शक्ति नहीं थी।

मेरा दिन गरीबोंमेंही बीता है मैंने दुख और यातनाके अनेक करुणाजनक दृश्य देखे पर यह सबसे बढ़कर था। उनके चले आनेका क्या कारण था। इसकी जांच होगी पर इतना तो स्पष्ट था कि उनकी दशा अत्यन्त शोचनीय थी और इसी दुर्दशासे हताश होकर वे लोग बाहर निकले। उनके हृदयमें एक यही आशा थी कि महात्मा गांधी उनके सारे दुःखोंका निवारण करेंगे।

हैजाके प्रकोपसे पीड़ित इन कुलियोंकी यातनाके दृश्यको मैंने घूम २ देखा। इस दुखमें भी उनमें साहस था। केवल एक आशाके सहारे वे सारी यातनायें पूर्ण उत्साहके साथ सह रहे थे। वही आशा उन्हें सहन करनेकी शक्ति प्रदान कर रही थी। स्त्रियोंके लिये यह आत्मबलसे कम न थी और इसीके द्वारा वे अपने बाल बच्चोंको भी उत्साहित कर रही थीं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक जो उनकी सहायता कर रहे थे उनकी इस भावनासे विस्मित थे। केवल एक विश्वासने उस दृश्यको उच्चतर बना दिया था और उसमें आत्मबलका संचार किया था।

महात्मा गांधी इस बातके कट्टर विरोधी हैं कि उनके नाम-पर कोई भी धार्मिक संस्था कायम की जाय। उन्होंने स्वयं कई बार कहा है कि मैं एक साधारण व्यक्ति हूं, मुझमें कोई दैवी शक्ति नहीं है। परब्रह्ममें लीन रहकर प्रत्येक व्यक्ति इस अवस्थाको पहुंच सकता है। पर चांदपुरके कुलियोंकी श्रद्धा भावात्मिक थी न कि व्यक्तित्वकी, और वह भाव महात्मा गांधीकी प्रतिमा थी जो

उनके हृदयमें भरा था उनका नाम उस भावका वाह्यरूप था। उन्हींपर उनकी सारी आशा थी।

मैं एक घटनाका आद्योपान्त वर्णन करना चाहता हूं, क्योंकि इसका मेरे दिलपर गहरा असर पहुंचा। जिस समय हम-लोग कुलियोंका अंतिम दल लेकर चांदपुरसे ग्वालंदो जा रहे थे मैं जहाजकी छतपर टहल रहा था। कुलियोंके नेत्र आशापूर्ण थे, उनमे एक दुबला पतला १२ बरसका लड़का था। उसे भीषण हैजा हो गया था। वह इतना कमजोर था कि उसे टेकाकर जहाजपर लाया गया था। जहाज एक जगह मोड़पर किनारेके पास आ पहुंचा। लड़के "गांधी महाराजकी जय" "गांधी महा-राजकी जय" करके चिल्ला उठे तत्क्षण मेरी दृष्टि इस असहाय बालकपर पड़ी। इसका चेहरा मारे जोशके दमक उठा। बड़ी कठि-नाईसे उसने अपना हाथ हिलाया और क्षीण पर जोशभरे शब्दोंमें चिल्ला उठा "गांधी महात्माकी जय।" उस यातना और दैन्या-वस्थामें भी उस लड़केका क्षीण चेहरा आज भी मेरी आंखोंके सामने नाच रहा है। उस अवस्थामें भी उसमें एक शक्ति थी, जिसने मृत्युको परास्त कर दिया था, उसकी आत्मामें आनंद तथा शक्तिने ज्योति डाल दी थी। उसकी दैन्यावस्था और साथ ही उत्साहको देखकर मेरी आंखोंमें आंसू भर आये और मुझे वेदके निम्न लिखित वाक्य स्मरण हो आये—

असतो मा सद्गमय, तमसो माज्योतिर्गमय।
मृत्यो मा ममृतं गमय, अविरतिर्मा पधि॥

अर्थात् ऐ सच्चिदानंद। तू मुझे असत्से सत्में; निविड़ अंधकारसे प्रकाशमें मृतसे अमरत्वमें ला और मुझे आत्मबोध दे।

मेरे हृदयमें यह भाव उत्पन्न हुआ कि इस बालकके विश्वासमें ईश्वरका लेश है। इस यातनामय दृश्यने मेरे हृदयमें सदा यह भाव भरे थे कि अनंत आहमें ही ईश्वर वर्त्तमान है।

मेरे हृदयमें बराबर यह प्रश्न उठाता रहा—क्या यह धार्मिक जागृतिके लक्षण हैं? मेरा विश्वास दृढ़ होता गया। भारतकी निर्धन, दीन असहाय प्रजाकी पुकार ईश्वरके कानोंतक पहुंच चुकी है। उनकी मुक्तिका समय आ गया है। विगत चार महीनोंमें मुझे उत्तर भारतमें सिन्धसे लेकर बंगालतक भ्रमण करनेका अवसर मिला था। मुझे नयी जागृतिके लक्षण चारों ओर दिखाई देते थे और इसकी जड़ राजनैतिक आन्दोलनसे कहीं गहरी गयी है। इसके लिये गरीबोंमें अधिक उत्साह है। फ्रान्सकी राजक्रान्तिके पूर्व फ्रांसकी जो अवस्था थी उससे इसमें बहुत कुछ समता है, जिस समय फ्रांसकी पीड़ित कृषक जनताके हृदयमें समता और उत्थानके भाव जागृत हुए थे।

पुनरावृत्ति तो होगी पर मैं अपने भावको और भी व्यक्त भाषामें प्रकट करना चाहता हूं। निम्न लिखित बातका मेरे हृदयपर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा है। अर्थात् भारतके करोड़ों निर्धन आज जागृत हो गये हैं और यातना असहायावस्थाके अन्धकारसे निकलकर अब वे प्रकाशमें आ रहे हैं। अपने उद्धारका लक्ष्य उन्होंने महात्माजीको बनाया है। इन लोगोंने बिना किसी

सोच विचारके अपनी आशा, अपना भविष्य और अपना सर्वस्व महात्माजीके हाथमें छोड़ दिया है। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि उन्हींके द्वारा इनका उद्धार हो सकता है। ये बातें एक जगह नहीं हो रही हैं। मेरे भ्रमणमें मुझे स्थान स्थानपर इन अछूतोंसे काम पड़ा है। मेरा नाम सुन हजारों एकत्रित होकर अपनी यातनामयी गाथा सुनाते हैं। पर अब उन्हें अभूतपूर्व उत्साह हो रहा है। उनके वेगारकी, जमींदारोंके अत्याचारकी और पुलिसकी ज्यादतीकी दुःखमयी गाथा सुनकर खून खौलने लगता है। कभी कभी वे भी बौखला जाते हैं, काबूके बाहर हो जाते हैं पर सँभल जाते हैं। अग्नि भीतर जल रही है पर उसकी प्रबल-शिखा बाहर नहीं निकलने पाती।

एक उदाहरण मैं यहां दे देना चाहता हूं। शामका वक्त था, मैं गोरखपुरसे लौटा था। पटना स्टेशनके प्लेटफार्मपर मैं टहल रहा था। मैं अपने भावोंके बटोरनेमें लगा था। कितने लोग मुझसे मिलने आये थे। ऐसे समयमें शान्ति रखना कठिन था। स्टेशनके मेहतर और भंगी मेरा नाम सुनकर मेरे पास आ जुटे। उन्हें मालूम था कि मैं महात्माजीका मित्र हूं और इसी कारण वे मेरे साथ हो गये।

आते ही उन्होंने चुपचाप हाथ जोड़ मुझे दण्डवत किया। इसके बाद उन लोगोंके अगुआने चिल्लाकर कहा—“गांधी महाराजकी जय।” यह साधारण जलसोंके समयकी हंसीका निनाद नहीं था। यह धार्मिक विश्वासका घोष था। उनके नेत्रोंके सामने

प्रकाश प्रकट हुआ और वे उसकी उपासनाके लिये हाथ जोड़े खड़े थे मानों वे सन्ध्यावन्दनके लिये एकत्रित हुए थे।

कुछ क्षणके बाद वे सब अपने अपने कामपर चले गये। उस क्षणिक उत्साहमें मैंने वही गम्भीरता देखी जो मैंने अनेक बार अन्य स्थानोंपर देखी थी।

उस दिन मुझे विदित हुआ कि इन गरीबोंके हृदयमें धर्मका कितना प्रबल स्रोत बह रहा है। पटना स्टेशनके उस सायंकालीन दृश्यने मुझे चांदपुरकी घटना स्मरण करा दी, क्योंकि उस दिन चांदपुरमें भी निराश कुलियोंके बीच घूम घूमकर मैं देखता था कि महात्माजीके नामपर, उनकी जयध्वनिपर उनमें उत्साह और आशाके नये चिह्न प्रकट हो जाते थे।

चांदपुरके उस नैराश्यान्धकारको आशाकी गम्भीर रेखाने दूर कर दिया। चाहे उन दीन दुखियोंकी यातना कितनी ही गम्भीर क्यों न हो, चाहे वे जीवनकी कैसी ही दुःखावस्थामें क्यों न रहे हों, उद्धारकी इस प्रकारकी आशायें, जो उनके हृदयमें समा रही हैं, उनके इस अधम जीवनके लिये, जिसमें किसी प्रकारका उत्साह और आशा नहीं है, अतीव उपयुक्त हैं। उनके दुःखमय जीवनकी काली घटा फट गयी है। जीवनका स्रोत अब बाहर निकल पड़ा है। यदि बाह्य असफलता भी हो जाय तो इसे निरर्थक नहीं कहा जा सकता।

एक ओर तो इनका कष्टमय जीवन और दूसरी ओर उत्साहका नया स्रोत क्या ही करुणाजनक है। दुखकी बात तो

यह है कि लोग इनकी ओर लापरवाही दिखाते हैं, इन्हें नीच कहते हैं मानों अशिक्षित होनेसे ये किसी अर्थके नहीं हैं; पर वास्तवमें इस कष्टमय जीवनमे भी उनमें एक तरहका सौन्दर्य है, हमें उन्हें घृणा करनेका क्या अधिकार है। यही ईश्वरके प्रिय-पात्र हैं। प्रभु ईसामसीह धनी और वैभवशाली नगरोंसे मुंह मोड़कर सीधे गैलीलीके गरीब किसानोंके पास गये उन्हें आशीर्वाद देते हुए बोले—"तुम लोग धन्य हो, क्योंकि स्वर्गमें तुम्हारा ही राज्य होगा। यहींतक नहीं बल्कि उन गरीबोंके साथ रहना पसन्द किया। यद्यपि यह जानते थे कि उनमें दोष और अवगुण भरे हैं और उन धनी फेरासिस लोगोंके साथ रहना पसंद नहीं किया जो सचाईका बुरक़ा डाले फिरते थे, क्योंकि उन गरीबोंके दोष प्रगट थे और उनके अनुसार दण्ड भोगनेके लिये वे तैयार थे पर धनिकोंके दोष सदा परदेकी आड़में रहते हैं और इस जीवनमें उन्हें उनके लिये समुचित दण्ड नहीं मिलता।

इस प्रकार यह प्रत्यक्ष है कि उन गरीबोंका हृदय निर्मल और स्वच्छ रहता है और अच्छी बातोंका उनमे तुरत समावेश हो जाता है जो धार्मिक विश्वास इनके अन्तस्तलमें जड़ जमा लेता है इसका फल उन बनावटी सिद्धान्तोंसे जो शिक्षित समाजसे चलाये जाते हैं, कहीं सुस्वादु और मधुर होता है। महात्मा गांधीका अपने पीड़ित भाइयोंके साथ पीड़ा सहना, दरिद्रोंके साथ दरिद्रतामें रहना जनताके हृदयको वशमें कर लेता है।

इन्हीं गुणोंके कारण वे महात्माजीको अपना इष्ट देव समझते हैं, इसीसे वे लोग मूक होकर उनकी आज्ञाका पालन करते हैं और इसीसे करोड़ों भारतवासियोंके निराशापूर्ण हृदयमें आशाका अङ्कुर उग रहा है।

ये सब लक्षण क्या दिखलाते हैं? यदि ये सब बातें सच निकलीं तो क्या परिणाम होगा? फ्रांसकी राजक्रान्तिके बारेमें कारलाइलने एक दुःखद कथा लिखी है। सरकारी कागज पत्रके रखनेवाले अपना काम संभाल रहे थे, इतनेमें विप्लव-वादी दल उनके पास पहुंचा और बोला, यदि तुम लोगोंने गरीबोंका पक्ष ग्रहण नहीं किया तो तुम्हारी खाल खींच ली जायगी। मुझे विश्वास है कि भारतका यह धार्मिक और सामाजिक आन्दोलन सदा अहिंसात्मक रहेगा और फ्रांसकी राजक्रान्तिकी तरह कभी उग्ररूप धारण नहीं करेगा। भारत हृदयसे शान्तिप्रिय है। गौतम बुद्धकी शिक्षा इसके रोम रोममें व्याप्त है। पर अफसरोंकी उदासीनता यदि इसी तरह बनी रही और अन्तमें ये अफसर उन गरीबोंके विरोधी बन गये तो पशुबलका सहारा न लेने पर भी यह द्वन्द बड़ा ही भीषण होगा।

मुझे १९०७ के पंजाबके दिन भलीभांति स्मरण हैं। वह समय बड़ाही नाजुक था। मैंने एक सरकारी अफसरसे एक साधारण काम कर देनेके लिये कहा, क्योंकि ऐसा करनेसे वह जनताके सम्पर्कमें आ जाता था। उसने मुझसे कड़ककर कहा,

इन कागज पत्रोंको क्यों नहीं देखते ? मैंने उसे कारलाइल और फ्रांसकी राज्यक्रान्ति वाली गाथा कह सुनायी।

तबसे आजतक कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ा है। सरकारी दफ्तरोंके कागजपत्रोंका बंडल दिन दिन बढ़ता जा रहा है। पहाड़की ठंडी हवा विना अब भी चैन नहीं पड़ता, सरकारका विदेशीपन आज भी ज्योंका त्यों बना है। शासन सुधार व्यर्थ हुए। कमसे कम चांदपुरमे मुझे यही अनुभव हुआ। वहां पग पगपर सरकारकी असफलताके चिह्न देख पड़े।

मैं कुछ और कहना चाहता हूं। मुझे और भी घृणित अनुभव हुआ है। अङ्गरेजी शिक्षासे शिक्षित समुदाय और सर्वसाधारणमें घोर अन्तर पड़ गया है। सरकारकी आधुनिक कार्यवाही दोषपूर्ण है तो शिक्षित समुदाय निर्दोष नहीं है। भारतकी गरीब जनताके प्रति उसने असीम उदासीनता दिखलायी है।

महात्मा गांधीने 'यंग इन्डिया'में लिखा था,—सच बात यह है कि भारतके बड़े लाट प्रजासे अलग होकर ७ महीने पहाड़ोंकी सैर करते हैं। ऐसी दशामें इन्हें सच्ची बातोंका ज्ञान होना नितान्त असम्भव है। यदि वे पहाड़ परसे उतर आते हैं तो भी उनका दफ्तर वहीं टंगा रह जाता है।

ऐसी दशामें करोड़ों गरीबोंकी पुकार उनके कानोंतक कैसे पहुंच सकती है।

उसी यङ्ग इण्डियाके उसी अंकमें मिस्टर अब्बास तैयबजीने लिखा था कि अङ्गरेजी शिक्षाके कारण जो पोशाक मैंने आजन्म

धारण की थी, उसे त्यागकर जबसे मैंने खद्दर धारण किया है, तबसे गरीबोंके हृदयके तहतक मैं पहुंचने लगा हूं।

उन्होंने लिखा है, मेरे स्वास्थ्यकी जरा भी चिन्ता न करना। वेजवाड़ेमें स्वीकृत खद्दरके कार्यक्रमने मेरे शरीरमें नये जीवन-का संचार कर दिया है। मुझे विचित्र अनुभव हो रहा है। जहां कहीं मैं जाता हूं, आबालवृद्ध वनिता सभी मेरा हृदयसे स्वागत करते है। पर मेरे कितने ही साथी आगे बढ़नेका साहस नहीं करते। वे लोग अभी उसी कुलीन दलमें पड़े हैं जिससे मैं अलग हो गया हूं। सर्व साधारणमें मेरा कितना बड़ा सम्मान है और उनकी मेरे ऊपर असीम दया है। इस फकीरी पहनावेने सब भेदभाव दूर कर दिये हैं। अब सब मुझसे निःसङ्कोच मिलते हैं। यदि मुझे कुछ दिन पहले मालूम हो गया होता कि इस अङ्गरेजी पोशाकने ही मुझे अपने गरीब भाइयोंसे दूर कर रखा है तो मैं इसका कभी प्रतीकार कर चुका होता।

एक बात और है। छुआछूतके अमानुषिक बन्धन और जातपांत-के भेदभावने लोगोंके बीच और भी फर्क डाल रखा है जो और भी लज्जाजनक है। यदि गोरखा सैनिकोंने अपने घृणास्पद व्यव-हारसे असहाय और निरीह कुलियोंको चोट पहुंचायी तो जात पांतके भेदभावसे अपने गरीब भाइयोंकी आत्माको चोट पहुं-चाकर हम लोगोंने कम घृणास्पद काम नहीं किया है। मुझे लिखते और भी लज्जा आती है कि दक्षिण प्रदेशमें जो ईसाई जातपांतका भेदभाव रखते हैं, वे उन ईसाइयोंके साथ जो जात पांतका भेदभाव नहीं रखते दुर्भाव रखते हैं।

मेरा हृदय भरा है। जो कुछ मैं लिख रहा हूं मेरे हृदयपटपर महीनों और वर्षोंसे अपनी छाप जमाता चला आ रहा है। अन्तमें मैं फिर जोर देकर कहता हूं कि गरीबोंकी आह निवारण ही वर्तमान भारतके लिये प्रधान विषय है।

(रेवरेन्ड सी० एफ० एण्डरूज एम० ए०)

स्वराज्यका मूल्य

राष्ट्रीय भाव और छापका घातक विदेशीका जुआ है न कि स्वेच्छाचारी सत्ता। राष्ट्रीयताके भावका लोप होते ही मनुष्यका सार्वजनिक और व्यक्तिगत सदाचार लुप्त हो जाता है।

सरटामस मुनरो।

जब कभी मैं इस प्रश्नपर विचार करता हूं कि भारतके कितने ही लोग महात्माजीके द्वारा की गयी भारतकी नवीन जागृतिके सच्चे स्वरूपका उचित मूल्य नहीं लगा सकते तो उनकी योग्यतापर सन्देह होने लगता है। मेरे हृदयमें यह भाव उत्पन्न होने लगता है कि ऐसे मनुष्यके प्रादुर्भावने—जो कि अपनेको मनसा, वाचा और कर्मणा स्वतन्त्र समझता है,—हम लोगोंको विस्मित कर दिया है। क्या यह भी सम्भव है कि ये लोग अज्ञानतावश ऐसे मनुष्यके सहवाससे दूर रहना चाहते हैं। क्या यह बात तो नहीं है कि ये लोग उस व्यक्तिकी मानसिक स्थितिको नहीं समझ सके हैं जो यह जानकर कि हमारे नैसर्गिक अधिकार कुचले जा रहे हैं उनकी रक्षा करना अपना परम कर्तव्य समझता है, संभव है कि उनकी रहन सहन और शिक्षाने उन्हें इतना जड़ बना दिया है कि वे भारतकी दीन, हीन दशापर युक्तियुक्त विचार नहीं कर सकते और भारतीय प्रश्नपर विचार और न्याय कराना अपना अधिकार न समझ केवल भिक्षाकी

नीतिका सहारा लेकर दूसरोंकी दयाको ही परम सौभाग्य समझते हैं।

यदि इन शङ्काओंमें लेशमात्र भी सचाई है तो मुझे लाचार होकर कहना पड़ेगा कि भारतमें राजा और प्रजाके सम्बन्धमें सुधार होना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि मानसिक विकारके चिह्न स्पष्ट हैं। मेरी समझमें आता है कि स्वतन्त्र विचार भारतवासी, नौकरशाहीकी आंखोंमें बेतरह खटकता है और असह्य है। इसके विपरीत होना विस्मयजनक है क्योंकि नौकरशाहीके विचारके यह बाहर है कि भारतवासी होकर उनकी समता कर सके, पर यदि महात्माजीसे सुशिक्षित, देशवासियोंके लिये अप्रिय हैं तो यह बड़ी चिन्ताकी बात है।

पर यह निःसन्देह है कि कितने ही भारतवासी इससे असन्तुष्ट हैं, उनको इस बातकी आशङ्का है कि शान्तिभङ्ग होगी और उपद्रव मचेगा। केवल उपद्रवकी आशङ्कासे वे घबरा जाते हैं। कण्टकपूर्ण मार्ग उन्हें लाचार कर देता है। खतरेके समय वे दूसरोंकी सहायता ढूंढ़ते हैं, वकीलों और कानूनोंके सहारे वे लोग संसारकी स्वतंत्रता और प्रतिष्ठित शक्तियोंमें बराबरीका स्थान प्राप्त करना चाहते हैं। वे लोग स्वराज्य तो चाहते हैं पर बिना किसी तरहकी असुविधा और कठिनाई उठाये अर्थात् स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी बातें वे करेंगे पर यदि उसके साधनमें किसी तरहकी विपत्ति झेलनी पड़े अथवा जानमालकी आशङ्का हो तो वे लोग पीछे कदम हटा लेंगे पर आजतक इतिहासमें कोई

प्रमाण नहीं मिलता जहां एक भी राष्ट्र इस कायरतासे स्वराज्य प्राप्त कर सका है।

स्वराज्य प्राप्त करना बच्चोंका खेल नहीं है। अन्य राष्ट्र वादियोंका मत है कि स्वराज्य शान्त रहनेसे नहीं मिल सकता है और विना इसका ज्ञान प्राप्त किये कोई भी जाति दासतासे मुक्त नहीं हो सकती। जिन लोगोंकी धारणा इसके विपरीत है उनसे मैं कहूंगा कि जिस बातको अन्य राष्ट्रोंने असीम आत्मत्याग यातना और कठिनाई सहकर जानतक खोकर प्राप्त किया है, उसी अमूल्य रत्नको वे करोड़ों अशिक्षित भारतवासियोंके लिये मिन्नत और प्रार्थनापत्र द्वारा प्राप्त करना चाहते हैं। स्वराज्यका सबसे बढ़कर मूल्य उसकी प्राप्तिके समय आत्मज्ञान है।

पहले आप दासोंको स्वराज्य दिलाकर तब उन्हे स्वतन्त्रताकी शिक्षा देना चाहते हैं, पर स्वराज्यकी प्राप्ति इस प्रकार नहीं होती। इसका आगमन बाहरसे नहीं होता, इसकी उत्पत्ति बालकोंकी भांति है। भारत माताको इसका जन्म देना होगा। और इसके पालन पोषणमे माताकी तरह सभी कठिनाइयों और तकलीफोंको बरदास्त करना होगा। इसके अतिरिक्त स्वराज्यका सच्चा स्वरूप दूसरा नहीं हो सकता।

कांग्रेस दलका सिद्धान्त एक नौकरशाहीको हटाकर दूसरे नौकरशाहीकी स्थापना करना नहीं है।

कांग्रेस दलवालोंका मत है कि कुछ चुने चुनाये शिक्षित भारतवासियोंके हाथमें शासनकी अधिकांश जिम्मेदारी दे देना

ही सच्चा स्वराज्य नहीं है। जिस स्वराज्यके लिये वे लोग संकट झेल रहे हैं, वह प्रबुद्ध भारतके मनोविन्यासका फल होगा। इसके लिये वे लोग हर तरहकी पीड़ा सहनेके लिये तैयार हैं। भारतको स्वराज्य तभी मिल सकता है, जब उसकी सन्तान आत्मत्यागके लिये पूर्णतया तैयार हो, अन्यथा नहीं। उस ज़मानेमें जब कि लोग मानसिक भावनाओंको कार्यमें परिणत करनेके लिये सदा तैयार रहते थे चारण लोग अनेक तरहकी गाथायें गाया करते थे। सचाई और न्याय उनका प्रधान लक्ष्य था। उनका विश्वास था कि ईश्वरने प्रत्येक मनुष्यको स्वतन्त्र और बराबरीका बनाया है और उन्हें प्राप्त करना, उनके लिये कटकर मर मिटना प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है।

भारतने भी आज वही सुख स्वप्न देखा है। उसने भी अब बराबरीकी प्रतिष्ठा पानेके उपयुक्त समयको देख लिया है, उसकी रगरगमे उत्साहका स्रोत बह रहा है।

संसारमे कौन ऐसा निर्जीव मनुष्य होगा जिसका हृदय स्वराज्यकी प्रत्याशासे उछल न पड़ता हो। इसके लिये लोगोंने कौनसे संकट नहीं उठाये हैं। कौनसी यातनायें नहीं झेली हैं। स्वराज्यके नामपर सेनायें बिना अन्न जलके सुनसान जंगलको चीरती, बर्फीले पहाड़ोंको रौंदती अपने आहत पैरोंके रक्तसे पथ-रजको पुनीत करतीं कहां नहीं चली गयीं? घोर जाड़ेमें, सर्दीके मारे हाथ पैर ठिठुर रहे हैं, बदनकी हड्डियां अकड़ी जा रही हैं, पर उस जोशमें इसकी किसने परवा की है?

स्वराज्यके लिये माताओंने पुत्रोंको, पत्नियोंने पतियोंको, नायिकाओंने प्रेमी नायकोंको रणक्षेत्रमें आत्मोत्सर्ग करनेके लिये सहर्ष भेजा है।

स्वराज्यके लिये लोगोंने सर्वस्व त्यागा है, घरोंको उजाड़कर जंगल कर दिया है, गांवोंको बियावान देखा है, जंगलोंमें जाकर मारे मारे फिरना पसन्द किया है पर अनादृत होकर दया-भिक्षा नहीं स्वीकार की है।

स्वराज्यके लिये कितनेही नर नारियोंने देश-निकालेका दण्ड पाकर अजनबियोंमें जाकर जीवन बिताये हैं, जेलोंमें वर्षों सड़े हैं, कोड़ोंकी मार बरदाश्त की है, गोलियोंके शिकार बने हैं, फांसीपर लटक गये हैं और अन्ततक यही कहते गये हैं—

"बुरा है जीना अधीन रहकर

है मरना अच्छा स्वतन्त्र होकर"

और ऐसेही लोग प्रतिष्ठाके गगन-गौरवके सिंहासनपर पूर्ण प्रतिष्ठाके साथ बैठाये गये हैं। वीरपुङ्गवोंकी नामावलीमें इनका नाम सबसे पहले स्वर्णाक्षरोंमें लिखा गया है। इन्हीं लोगोंके विश्वास, निर्भयता और आत्मत्यागके पूर्ण प्रसाद और प्रतापसे मानवसमाज अपने आदर्शके उन्नत शिखरपर आरूढ़ है। पर वे लोग भिक्षुक नहीं थे। उन लोगोंने शक्तिसम्पन्नोंके द्वारपर टुकड़ोंके लिये मुंह नहीं फैलाया था। जिस वस्तुको वे लोग अपने बाहुबलसे कमा सकते थे, उसके लिये उन्होंने किसीके सामने

ज़बान नहीं हिलायी। ईश्वरके भरोसे वे लोग अनेकों आपत्तियों और कठिनाइयोंके रहते अपने तथा अपने भाइयोंके नैसर्गिक अधिकारके लिये लड़े। और वे लोग अनेक बार अपने ध्येयको प्राप्त कर सके। केवल इस दृढ़ विश्वासके सामने कि उनका उद्देश्य संगत है और ईश्वर उनकी अवश्य सहायता करेगा, बड़े बड़े बलिष्ठ साम्राज्य उनके सामने झुक गये।

और थोड़े दिन हुए किसी देशवासीने कहा था—अब वे दिन गये जब लोग जोशमें आकर आश्चर्यजनक काम कर बैठते थे। मैं उनसे पूछूंगा—यह कैसे हुआ, क्योंकर हुआ और कब हुआ? केवल दृढ़ विश्वासके कारण ही लोगोंने बड़े बड़े काम किये। अब वे बात केवल इसी कारण नहीं हो सकतीं कि लोग हताश हो गये हैं और समझते हैं कि अब ऐसे काम नहीं हो सकते।

भारतके सन्तानगण! मैं आपलोगोंसे पूछता हूं—क्या आप लोग सचमुच स्वराज्य चाहते हैं? क्या आप लोग उसी तरहका स्वराज्य चाहते हैं जिस तरहका अन्य देशवासियोंने चाहा और प्राप्त किया है? तो क्या आप उतने आत्मत्याग और उत्सर्गके लिये तैयार हैं?

क्या आपका हृदय दृढ़ है कि स्वराज्य आपका नैसर्गिक अधिकार है और ईश्वरकी प्रेरणायें आपके पक्षमें हैं। यदि यह विश्वास, यह निश्चय आपके हृदयमें जम गया है तो विश्वास

मानिये कि आपके लिये दिन बीत नहीं गये हैं और आप अब भी आश्चर्यजनक काम कर सकते हैं। और केवल इसीके द्वारा आप भारतके लिये स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान अवस्थाका निस्तार इसके विना नहीं हो सकता। आप केवल विश्वासपर आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं। विश्वास और आत्मत्याग यही दो साधन हैं।

तो अपने नेताको इसीके आधारपर तौलो। उसीको अपना नेता मानो जो आश्चर्यजनक काममें अब भी विश्वास रखता हो। जो भारतकी अतुल शक्तिपर विश्वास रखता है, वही आप लोगोंको स्वराज्यके पवित्र मन्दिर तक पहुंचा सकता है और वही भारतकी जनताको उसके लिये उत्साहित और उद्यत कर सकता है।

मेरी तो यही धारणा है कि ईश्वरने भारतपर परम अनुग्रह-कर उपयुक्त समयमें उसकी सहायता की है और पूर्ण सुयोग्य-नेता भेज दिया है। 'मेरी दूसरी धारणा यह है कि इस समय उसके साथ पूर्ण सहयोग न करना मूर्खतापूर्ण है और उनके कार्यक्रम-जिससे हम लोग पूर्णतः सहमत नहीं हैं-की आलोचना करना राष्ट्रीय आन्दोलनपर वज्राघातके समान है। बड़े भाग्यसे हम लोगोंको ऐसा नेता मिला है जो विश्वास, धैर्य साहस और निर्भयताकी मूर्त्ति है। देशाभिमान जिसमें कूट कूटकर भरा है, जनताका जिसपर पूर्ण विश्वास है और जो उन्हें पूरी तरहसे उत्साहित कर सकता है। यदि हमलोगोंने संशय और भयके

कारण उससे पूर्ण लाभ नहीं उठाया तो आगे चलकर हमें अपनी करनीपर पछताना पड़ेगा, क्योंकि ऐसे महापुरुषोंका अवतार राष्ट्रके बड़े भाग्य और पुण्यसे होता है।

महात्माजीकी नेतृत्वशक्ति और योग्यतापर किसी प्रकारकी आशङ्का करना अपनी मूर्खता प्रकट करना है। देखना यह है कि भारत इनका उचित आदरकर इनकी आज्ञाओंका पालन करनेमें समर्थ होता है या नहीं।

(एस० ई० स्टोक्स)

गांधी और ठाकुर

श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर और महात्माजीमें ग्रीक और एशियाकी आत्माकी आभा मिलती है। रवीन्द्रनाथसे प्लेटोका स्मरण हो आता है। रवीन्द्र बाबू दार्शनिक कवि और शिक्षक हैं, जो अपने शिष्यों और अनुयायियोंपर अपना प्रभाव नहीं डालना चाहते और उन्हें अपना मत स्थिर कर लेनेकी पूरी स्वतन्त्रता देते हैं। न तो वह किसीकी तरफदारी करते हैं न व्यर्थ प्रशंसा करते हैं और न समालोचक बनते हैं। वे अपनी कवित्वशक्ति और प्रतिभाके सहारे स्वतन्त्र रूपसे काम करते हैं। अपनी कवितामें जो उदार और सौम्य भाव वे प्रकट करते हैं, बड़ा ही हृदयग्राही होता है और आदर्शकी ओर लोगोंको खींच लेता है। वे बङ्गालकी प्रतिभाके सजीव उदाहरण हैं। कला और संस्कृतिके लिये जगत्प्रसिद्ध हैं। जिस प्रकार अपने विद्यालयके लता निकुञ्जोंमें और वृक्षोंकी सघन छायामें प्लेटो (अफलातून) अपने शिष्योंको पढ़ाया करता था उसी प्रकार ये महापुरुष भी शान्ति-निकेतनमें बैठे शिक्षा दिया करते हैं। वृक्षोंकी सघन छायामें विचरते ये नये भाव और नयी भावनाओं द्वारा अपने शिष्योंकी बुद्धिका विकास किया करते हैं। उनकी आकांक्षा "विश्व भारती" नामी संस्था स्थापित करनेकी है। जहां संसारके सभी विद्वान कलामर्मज्ञ, कवि और दार्शनिक एकत्र हुआ

करें। ये पक्के आदर्शवादी हैं और आत्माकी पवित्र छायामें सदा रहना चाहते हैं। वे उन लोगोंकी भांति हैं जो तूफानसे बचनेके लिये दीवारका सहारा लेते हैं। महात्माजी वास्तवमें परम भक्त हैं। वे कट्टर प्रजातन्त्रवादी हैं और प्राकृतिक नेता हैं जो अपने गुणात्मक क्रियाओं द्वारा जनतापर पूर्ण प्रभाव रखते हैं जिस महत् नियम और सिद्धान्तकी वे आयोजना करते हैं उसकी उपयोगिताके सभी कायल हैं। महात्माजी भारतके आदर्श पुरुष हैं; इनमें असीम धैर्य है अविरल गुण हैं, इन्हें किसी बातकी चिन्ता नहीं, किसी तरहकी आकांक्षा नहीं, न तो यशकी अभिलाषा न समृद्धिकी तृष्णा। पर मानवसमाजके प्रेममे बंधकर वे भारतके न्यायपूर्ण और संगत अधिकारोंकी प्राप्तिके लिये तन मन और धनसे लगे हैं। रेवरेण्ड होम्सका यह कथन कि—"महात्मा गान्धी वर्त्तमान समयका सबसे बड़ा आदमी है।" एकदम सच है और मेरी भी यही सम्मति है। "रोलाण्डके साथ मुझे टालस्टायका स्मरण होता है। लेनिनके प्रसङ्गमें नेपोलियन स्मरण आ जाता है। पर गान्धीके प्रसङ्गमें केवल ईसामसीह स्मरण आते हैं। वे सादगीका जीवन बिताते हैं, सत्यवादी और निष्ठावान हैं, आत्मत्यागी हैं, हर तरहकी यातना और कष्ट सहनेके लिये सदा तैयार रहते हैं, सदा सयत्न रहते हैं, और इसी तरह इस विश्वमें अखिलेश्वरके साम्राज्यकी स्थापना करते करते इस अनित्य और नश्वर शरीरको त्याग देंगे।

(सी० आर० सी०, कलकत्ता रिव्यू)

एशियाका सूर्य

मालाबार विद्रोह भारतकी उन महत् घटनाओंमें नहीं है, जिनमें महात्मा गान्धी और उनका असहयोग आन्दोलन है। जिस युगके लोग आधिभौतिक चमत्कारपर ही विशेष जोर देते हैं, उस युगमें भारतका सर्व प्रधान वीर नेता तपस्वी हैं जो सात्विक गुण, स्वार्थत्याग और आत्मशक्तिके कारण देश तथा विदेशमें बड़े आदरकी दृष्टिसे देखे जा रहे हैं। जिस समय पाश्चात्य सभ्य राष्ट्र अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखनेके लिये युद्धके अतिरिक्त दूसरा कोई उपयुक्त मार्ग नहीं देख रहे हैं, महात्मा गान्धी राष्ट्रीय आन्दोलनको असहयोगके पथपर ले जानेकी चेष्टा कर रहे हैं। उनका कथन है कि यदि भारतको रक्तपातसे ही स्वराज्य मिलना है तो हम अपना ही रक्त क्यों न बहावें और भावी सन्ततिके लिये यह आदर्श क्यों न छोड़ जायं कि भारतके वीरोंने अपनाही रक्त बहाया। हिंसा, मनसा और कर्मणा दोनों तरहसे आत्माकी दुर्बलताकी द्योतक है। वीर पुरुष अपने सतानेवालेसे भी घृणा नहीं करता।

यह आत्मबलका शस्त्र भी बड़ा उपयोगी है। इसका आरंभ उपाधियोंके त्यागसे हुआ है और जिस प्रकार भारतके लोग इसे अपनाते जायंगे,त्यों त्यों यह ब्रिटिशके साथ सम्बन्ध त्याग देनेके

योग्य होता जायगा। यदि इस असहयोग आन्दोलनका पूर्णतः सङ्गठन हो गया तो ब्रिटिशकी सैनिक शक्ति बेकार हो जायगी।

भारतमें आर्थिक स्वराज्य स्थापित करनेके लिये विदेशी वस्तुओंका त्याग और चरखों तथा करघोंका प्रचार आज कल इस आन्दोलनका प्रधान अङ्ग हो रहा है। पहली अगस्तको विदेशी वस्त्रोंकी भीषण होली अपने हाथों जलाकर स्वयं महात्मा गान्धीने इस आन्दोलनको प्रवर्त्तित किया। 'तिलक स्वराज्य फण्डका अधिकांश द्रव्य चरखे और करघेके प्रचारमें लगाया जायगा। इस ग्राम्य शिल्पके पुनरुद्धारका तात्पर्य केवल ब्रिटिश राजको धक्का पहुंचाना नहीं है। इसके पुनरुद्धारसे आर्थिक स्वराज्यकी बहुत कुछ आशा है।

भारतमें दरिद्रताका घोर साम्राज्य उसी दिनसे स्थापित हुआ जिस दिन इसके चरखे और करघे उखाड़कर फेंक दिये गये। यह डाइन (दरिद्रता) तभी दूर होगी जब देहातोंमें घर घरसे चरखेकी मधुर ध्वनि निकलेगी। विदेशी व्यवसायकी उपयोगिता सभी स्वीकार करते हैं। केवल विदेशी वस्त्र व्यवसायपर प्रतिघात करना चाहते हैं। विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार तो केवल एक अङ्ग है। असहयोग आन्दोलनके पूर्ण कार्यक्रम निम्न लिखित हैं :—

हिन्दू-मुसलिम एकता, राष्ट्रीय विद्यालयोंकी स्थापना, छूआ छूतका भेद भाव दूर करना, मादक द्रव्योंका पूर्ण बहिष्कार करना और आवश्यकता पड़नेपर कानूनोंको न मानना और

उनकी सविनय अवज्ञा करना, पर इसका आरम्भ पहले स्वयं महात्माजी करेंगे। राष्ट्रीय महासभाके आदेशके अनुसार असहयोगी ब्रिटिश अदालतोंको नहीं मानते और इस कारण हजारों देशभक्त जेलोंमें सड़ रहे हैं। कांग्रेसने सैनिकोंसे भी प्रार्थना की है कि यदि ब्रिटिश सरकार अंगोरा सरकारके साथ वैमनस्य प्रगट करे या छेड़छाड़ करे तो उसकी नौकरी छोड़ दें। अंगोरा सरकारके साथ वैमनस्यकी सम्भावनासे जो उत्तेजना फैली है उसका कारण केवल खिलाफतका ही प्रश्न नहीं है, बल्कि भारतका भी प्रश्न है। हिन्दू और मुसलमान दोनोंका कहना है कि भारतका धन, जन साम्राज्यकी शक्ति बढ़ानेके हेतु नष्ट न कीया जाना चाहिये। हड़तालोंकी सहायता भी इस आन्दोलनसे होती रही है जिनका प्रधान कारण मजूरोंकी गिरी दशा है। इतनेपर महात्माजीके हृदयमें घृणाके भाव नहीं आये हैं। महात्माजीकी प्रत्येक बात दृढ़ता पूर्ण होती है पर उनके शब्द इतने मधुर होते हैं कि जरा भी नही अखरते।

यद्यपि ब्रिटिश सरकारने समय समयपर जो सूचनायें निकाली हैं वे अधूरी और कभी कभी विरोधनी रही हैं तोभी प्रत्येक विचारवान उनके मननसे इतनी सत्य बातें अवश्य निकाल सकता है, कि प्रत्येक सच्चे समालोचकका मत है कि राष्ट्रीय आन्दोलनने आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है। पर भविष्यके लिये उन्हें घोर आशङ्का है। मेजीनीके पूर्व जो दशा इटलीकी थी भारतकी दशा उससे भी गिरी थी। यहांके निवासी नितांत

गरीब हैं, मूर्ख हैं जात पांत, धर्म और भाषाकी विचित्र विभिन्नता है। देशके धनीमानी लोग दूर खड़े होकर तमाशा देख रहे हैं। (क्या यह प्रत्येक धार्मिक आन्दोलनमें नहीं होता?) पर सर्वसाधारण भी महात्माजीकी तापसिक प्रवृत्तिको भलीभांति नहीं समझ सका है। असहयोग आन्दोलनको वे यथा रीतिसे नहीं चला रहे हैं। आसामके कुलियोंकी कार्यवाहीसे ब्रिटिश सरकारको कठिनाई तो अवश्य पड़ी पर इससे देशवासियोंको भी दुःख हुआ। गांधीजी शान्तिकी शिक्षा देते रहते हैं तोभी लोग उत्तेजित हो जाते हैं। उन्होंने स्वीकार किया है कि उनके साथी धार्मिक भावपर उतनी आस्था नहीं रखते जितनी स्वयं वे रखते हैं। आलोचकोंका कथन है कि हिन्दू मुसलिम एकता दिखौवा है। खिलाफतके धार्मिक प्रश्नको अपनाकर महात्माजी मुसलमानोंकी शैतानीकी बला अपने सिरपर ओढ़ ली है। किसी अंग्रेज आलोचकका तो यहांतक कहना है कि महात्माजीके साथी अलीबन्धु और अन्य मुसलिम सहायक, मुसलिम सत्ताकी स्थापनाकी विशेष चिन्ता कर रहे हैं। महात्माजीके चरखे और करघेके कार्यक्रमको भी तीव्र आलोचना की गयी है और उनपर दोष लगाया गया है कि स्वतन्त्र भारतके लिये वे कोई विधायक कार्यक्रम नहीं बना सकते। उनका मत है कि वे तपस्वी हैं और तपस्वी नेता होकर वे स्वभावतः अराजक हैं। उनका अन्त भयानक होगा यदि ब्रिटिश सरकार उन्हें दण्डित न भी करे तो भारतकी जनता ही उनके उद्देश्योंका तिरस्कार कर उन्हें त्याग देगी।

मैंने इन आलोचकोंके मतका संक्षेप विवरण केवल इस लिये दिया है कि वे बड़े महत्वके हैं। इससे किसीको यह भ्रम न होना चाहिये कि मैं इससे सहमत हूं। भारतके राष्ट्रीय आन्दोलनपर स्थिरमत अभी नहीं प्रकट किया जा सकता। पर इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि ब्रिटिश साम्राज्यकी शक्तिके पतनका दिन आ गया है। एशियायी जागृतिमें यह सबसे प्रधान ऐतिहासिक क्रान्ति है। इस जागृतिका प्रादुर्भाव भारतमें हुआ है। चाहे इसका कारण नरमदलवालोंका नियम-बद्ध शनैः विकाश हो, चाहे निरीह मजूरों और भूखे किसानोंके उद्वेगजनित उपद्रवोंके कारण हो, चाहे असहयोगियोंके सत्याग्रह-संग्रामके कारण हो, इसके साथ उन सब लोगोंकी सहानुभूति होनी चाहिये जो विश्वव्यापी स्वतन्त्रताके पक्षपाती और समर्थक हैं। पर यदि भारत असहयोग आन्दोलनके द्वारा अपना अभीष्ट सिद्ध कर सका तो मानव-समाजके इतिहासमें नये युगका समा-वेश होगा, क्योंकि असहयोग आन्दोलनकी सफलता सिद्ध कर देगी कि जिस प्रकार संग्राम आन्तरिक शक्तिको नाश करता है, उसी प्रकार स्वतन्त्रता स्थापित करनेके लिये यह एकदम व्यर्थ और निरर्थक है।

(न्यूयार्क नेशन)

महात्माजीका भारत ।
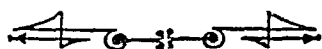
आज सारा भारत मोहनदास कर्मचन्द गांधीके हाथमें है। नये प्रकारकी राजनीतिक शिक्षासे हिन्दुओंको दीक्षित कर और आत्मत्याग तथा तपस्याका वेदविहितमार्ग चलाकर और उसका अनुसरणकर थोड़े ही दिनोंमें इस महापुरुषने हिन्दू और मुसलमानोंमें वह मेल करा दिया जो गौतम बुद्धके समयमें भी नहीं हो सका था। इस दुबले पतले अद्दे मनुष्यकी आत्मिक शक्ति इतनी बलिष्ठ हो गई है कि इसे गिरफ्तार करनेका ब्रिटिश सरकारको साहस नहीं होता।

गांधी नये प्रकारके धर्मका प्रवर्तक है। पर यह पूर्वके लिये नया नहीं है। जो कोई वर्नर्डशा और टालस्टायके सिद्धान्तोंका सहानुभूति पूर्वक मनन करता है, जो व्यवसायिक आविष्कार जनित बुराइयोंका अन्दाजा लगा लेता है और उनके निराकरणका प्रयत्न करता है, उसे स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक सभ्यतामें ही सारा दोष है। जो भारत अंग्रेजोंका अनुकरण कर रहा है, उनकी शिक्षा, दीक्षा, उनकी व्यवसायिक नीतिका अनुकरण कर रहा है, उसके लिये यह एकदम नया है। भारतके लिये व्यवसायिक, नैतिक और आर्थिक तथा मानसिक विकास झंझावातके समान है और महात्माजी इसीकी भविष्यवाणी कर रहे हैं, वे कहते हैं—

"पहले समयमें यह दस्तूर था कि जब दो व्यक्ति परस्पर लड़नेके लिये तैयार होते थे तो वे दोनों अपने बाहुबलको तौल लेते थे। पर आज क्या हो रहा है। एक मनुष्य एक तोप लेकर पहाड़की ओटमें छिपकर बैठ जाता है और बातकी बातमें हजारोंका प्राण ले लेता है। यही सभ्यता है। पहले समयमें अपनी इच्छानुसार लोग खुले मैदानमें, स्वच्छ हवामें काम करते थे, आज हजारों आदमी पेट पालनेके लिये कारखानों और खानोंमें जाकर काम करते हैं। उनकी दशा पशुओंसे भी गिरी है। पूंजीपतियोंके लाभके लिये अपनी जानको जोखिममें डालकर उन्हें भयावह पेशोंमें काम करना पड़ता है। यह सभ्यता इस प्रकारकी है कि धैर्य्यसे इसका स्वयं नाश हो जायगा।"

पाश्चात्यवालोंको गांधीजीका कार्यक्रम पागलपनसा प्रतीत होगा। और यह ऐसा है भी। स्वदेशी आन्दोलन और चरखे तथा करघेका प्रबल वेगसे प्रचार हो रहा है, पर इसका कारण गांधीजीकी कल्पना नहीं है। भारतवर्षके लोग सभ्यताके शत्रु नहीं हैं बल्कि इंग्लैण्डके। वे लोग प्राचीन व्यवस्थाके पक्षपाती नहीं हैं बल्कि नयी व्यवस्थासे घृणा करते हैं।

गांधीजीका कथन है—"हमलोग घोर यातना सह रहे हैं, सशस्त्र युद्धकी हममें सामर्थ्य नहीं। न तो हमारे पास अस्त्र शस्त्र हैं, न तोप, तलवार और न शक्ति। युद्धमें हमलोग क्षणभर भी न ठहर सकेंगे। बुराईसे बुराईपर विजय नहीं मिल सकती। घृणा और सभ्यता हमें खा जायगी और हमलोग हार

जायंगे। इस प्रकार विजय असम्भव है। केवल आत्मबलमें ही भरोसा है।"

भारतीय इसका आदर करते हैं। वे सदासे वीरोंकी उपासना कर रहे हैं। महात्माजी तपस्वी और विप्लववादी हैं। यदि गांधीका स्वप्न कभी भी ठीक उतरा तो संसारके इतिहासमें यह एकदम नई बात होगी। पर शत्रु घरमें है। प्रत्येक हिन्दूके हृदयमें घृणाके भाव वर्तमान हैं। पर इसके लिये भारतीयोको दोष देना अनुचित है। अंग्रेजोंने उनकी कैसी दुर्दशा कर डाली है। उनके कृश गात्र, दुर्बल शरीर, असहाय बच्चोंको देखकर सहजमें अनुमान कर लिया जा सकता है कि व्यवसायिक लूटसे क्या दशा हो रही है। इतने दरिद्र तो कहीं देखनेमें नहीं आते।

सत्याग्रह आरम्भ हो गया है। रक्तपात अवश्यम्भावी है। गांधी इससे घबराता है। पर वह उसको रोकनेकी हर तरहसे चेष्टा कर रहा है। यदि उसका आदर्श व्यवहारमें सफल न हो सका, यदि उसका धार्मिक-सिद्धान्त सामाजिक विषमताको दूर-कर इस आसुरी सभ्यताका नाश नहीं कर सका तौभी हिन्दुओंका मानसिक क्षेत्र बढ़ रहा है उन्हें नवीन प्रकारकी शिक्षा मिल रही है। यदि गांधी संसारको रक्षा न कर सका तो भी वह भावी मानव-समाजको उचित शिक्षा देगा।

*विन्सेएट अण्डर्सन—

* विंसेंट अंडर्सन एक अमरीकनपत्रके सम्पादक हैं, आप भारतभ्रमण कर अभी लौटकर गये हैं।

वाटटाइनके विचार

अमरीकाके प्रोफेसर वाटटाइन नामके एक नीतिज्ञ यहांकी राजनीतिक परिस्थितिकी जांच करने :आये थे। स्वतन्त्र अनुसन्धान न कर आपने सरकारी अधिकारियोंके सहयोगसे पूर्ण लाभ उठाया। आप महात्मा-जीसे भी मिलने गये थे। महात्माजीके बारेमें आप लिखते हैं—यह भारतवर्षका सबसे बड़ा आदमी है, पर इसे नेता कहना भूल है। इसका शरीर अति दुर्बल है और यह बड़ी सादगीसे रहता है। तपस्या और उपवाससे इसने अपने शरीरको पचा डाला है। इसकी स्थितिके मनुष्य प्रायः अन्धोंकी भांति आगे बढ़ते जानेके ही पक्षपाती होते हैं। पर इसके साथ यह बात नहीं है। वह शान्त और दूरदर्शी है।

सस्ती ग्रन्थमालाका प्रथम रत्न

आनन्द मठ

यह उपन्यास सम्राट् बङ्किमचन्द्र चटर्जीकी सर्वोत्कृष्ट रचना है। मातृभूमिके प्रति उत्कट अनुराग और प्रेमका यह प्रत्यक्ष स्वरूप है। इस पुस्तकसे नव बङ्गालने कैसा उत्साह ग्रहण किया था उसका अनुमान केवल १६०० के पूर्व और वर्त्तमान बङ्गालकी तुलना करनेसे ही लग सकता है। इसकी अपार उपयोगिता देखकर राजा कमलानन्दने इसे अनुवादित कर छपवाया था, जो इस समय प्राप्य नहीं है। और जो एकाध संस्करण निकले हैं वे अपूर्ण और महंगे हैं। इसीसे केवल प्रचारके ख्यालसे सस्ती दरपर यह पुस्तक निकाली गई है, अर्थात् २८ लाइनके पृष्ठके प्राय: २०० पृष्ठोंका मूल्य केवल बारह आना मात्र रखा गया है।

महात्माजी और वस्त्र व्यवसायी

या स्वदेशी आन्दोलन।

इस छोटीसी पुस्तकमें स्वदेशी आन्दोलनका संक्षिप्त इतिहास है। स्वदेशी आन्दोलनको किस अवस्थामें जन्म दिया गया और तबसे वह अनेक आपत्तियोंको सहता हुआ भी किस प्रकार फूलता फलता चला आ रहा है, इसका संक्षेप वर्णन है। स्वदेशीकी आवश्यकता और उपयोगितापर महात्माजी तथा देशके अन्य मान्य नेताओंके गवेषणापूर्ण विचारोंका संग्रह है पुस्तक बड़ी ही उपादेय है। कवरपर महात्माजीका ब्लाक भी है। ८० पृष्ठका मूल्य केवल ।)

मिलनेका पता—हिन्दी पुस्तक एजेन्सी,

१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता।